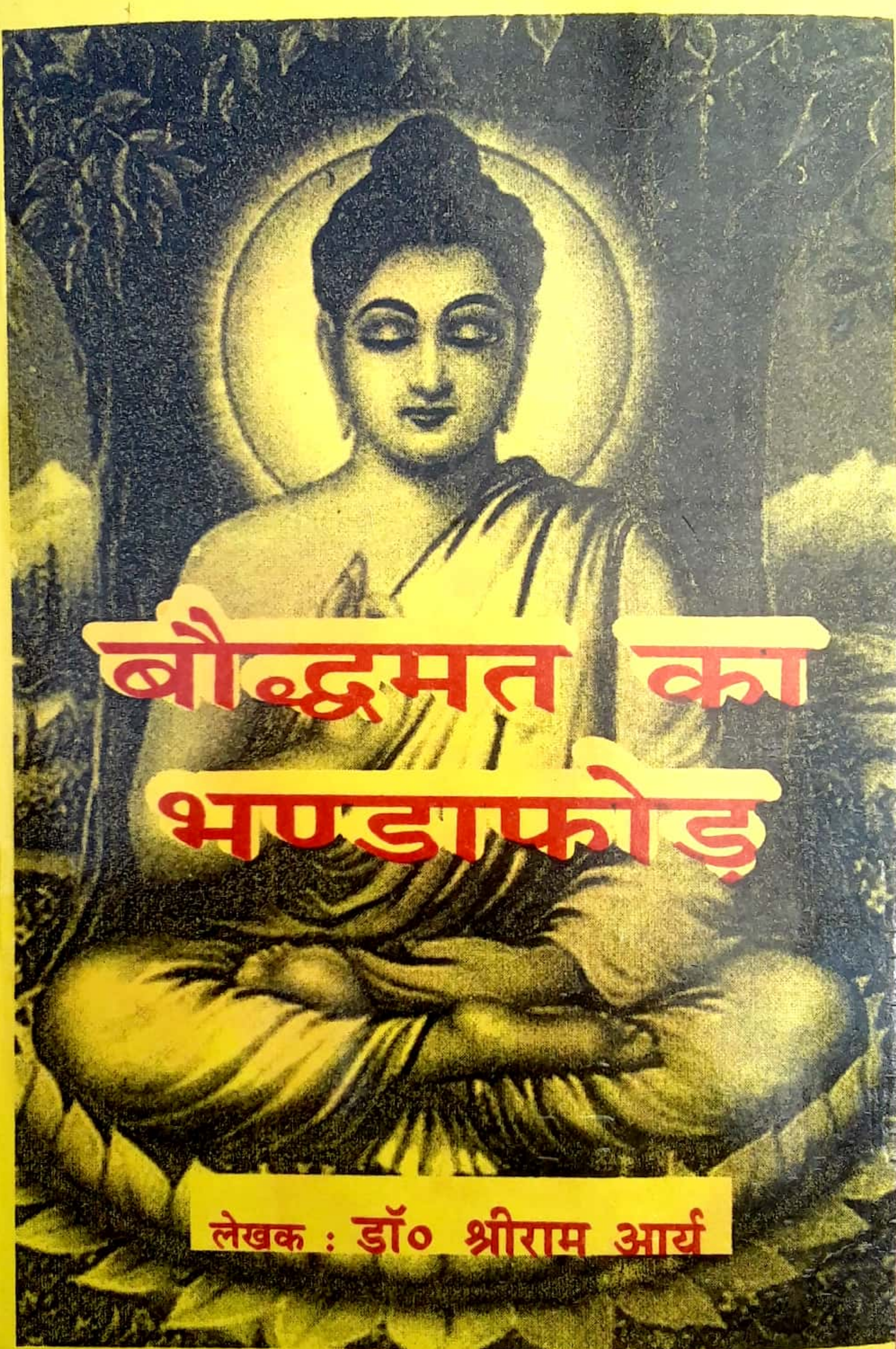

बौद्धमत का
भण्डाफोड़
लेखक : डॉ० श्रीराम आर्य

बौद्ध मत का भण्डाफोड़

लेखक

आचार्य डॉ० श्रीराम आर्य

(खण्डन-मण्डनात्मक साहित्य के प्रणेता)

सम्पादक एवं समीक्षक

लाजपतराय अग्रवाल

(वैदिक मिशनरी)

प्रकाशक

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

१०५८, विवेकानन्द नगर, गाजियाबाद- २०१००२ (उ.प्र.)

E-mail : lajpatraiaggarwal1058@gmail.com
Website: www.amarswamiprakashanvibhag.com
Ph. : 0120-2701095, 0120-2700042
M. : 09910336715, 09810816715, 09871230321

नवीन संस्करण, सन् २०१७ ई० ❑ मूल्यः पचास रुपया

Scanned by CamScanner

प्रकाशक : अमर स्वामी प्रकाशन विभाग
1058, विवेकानन्द नगर, गाजियाबाद-201002
(उत्तर प्रदेश) भारत
: (0120) 2701095, (0120) 2700042
चलभाष : 09910336715, 09871230321
शब्द संयोजक : आर्य कम्प्यूटर सेंटर, गाजियाबाद (उ.प्र.)
मुद्रक : आशा ऑफसैट प्रिंटिंग प्रैस, गाजियाबाद
मूल्य : पचास रुपया
लेखक : आचार्य डॉ० श्रीराम आर्य
(खण्डन-मण्डनात्मक साहित्य के प्रणेता
सम्पादक : लाजपत राय अग्रवाल (वैदिक मिशनरी)
चलभाष: 09910336715, 09810816715
संस्करण : सन् 2017 ई0

नोट : भारत भर में हमारे सभी वितरकों के पास उपलब्ध

Bodh Mat Ka Bhandafod

by : Dr. Shree Ram Arya
Amar Swami Prakashan Vibhag
1058, Vivekanand Nagar, Ghaziabad-201001 (U.P.)
India
E-mail : lajpatraiaggarwal1058@gmail.com
Website: www.amarswamiprakashanvibhag.com

New Edition, 2017 ❑ Price : Rs. 50/-

लेखक का परिचय



डॉ. श्रीराम आर्य

आदरणीय डॉ. साहब का परिचय आज किसी का मोहताज नहीं है, ये वो शख्सीयत रही, जिनकी सानी का आज तक कोई विद्वान् नहीं हुआ, जिन्होंने अपने साहित्य के द्वारा वो क्रान्ति मचाई कि विपक्ष आज तक कोई जवाब नहीं दे पाया।

आपने आजीवन साहित्य के द्वारा समाज की अपूर्व सेवा की, कासगंज जिला-एटा उ.प्र. (भारत) में रहते हुए अपनी प्रैक्टिस भी करते थे। आपका विशाल पुस्तकालय था, जिसमें अलभ्य ग्रंथ मौजूद थे। मेरा सम्पर्क डॉ. साहब से सन् 1975 ई. में हुआ था, वह मेरे कार्य से अत्याधिक प्रभावित थे एवं शास्त्रार्थ महारथी अमर स्वामी जी महाराज से घनिष्ठ सम्बन्ध था, यदा-कदा डॉ. साहब स्वामी जी के पास आकर प्रमाण इकट्ठे करते थे तथा सैद्धान्तिक चर्चा भी करते थे।

डॉ. साहब के एकमेव सन्तान (लड़की) थी और कोई

सन्तान नहीं थी, उनको चिन्ता थी कि मेरे बाद इस साहित्य को छापने वाला कोई नहीं रहेगा, यह प्रकाशन बन्द हो जायेगा। क्योंकि डॉ. साहब जहां भी कहीं किसी प्रकाशक या संस्था से अपने साहित्य के प्रकाशन की बात करते थे, तो सब हाथ खड़े कर देते थे कि कौन झमेले में पड़े? कौन रोज-रोज कोर्ट-कचहरी के चक्कर काटे?

अन्ततः डॉ. साहब ने अपनी व्यथा अप्रैल सन् 1980 ई. में अमर स्वामी जी महाराज के सामने रक्खी, स्वामी जी विधर्मियों से शास्त्रार्थ तो करते ही थे, परन्तु उन्होंने डॉ. साहब जी की व्यथा व उनके साहित्य का महत्व जानते हुए उनको सहर्ष स्वीकृति दे दी कि आगे यह समस्त साहित्य अमर स्वामी प्रकाशन विभाग से प्रकाशित होता रहेगा, आप चिन्ता न करें।

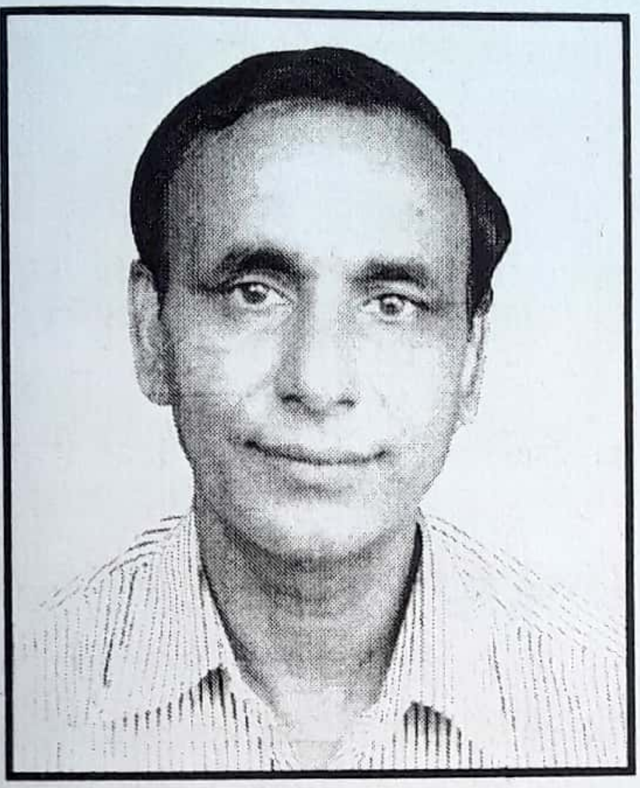
उस समय डॉ. साहब को कुछ राशि भेंट स्वरूप तथा उनका शेष समस्त साहित्य खरीद लिया गया, जो लगभग बीस हजार रुपये का था। फलतः डॉ. साहब ने अधिकार पत्र लिखकर दे दिया, जो शिवलिंग पूजा क्यों नामक पुस्तक के अन्त में छपा हुआ है। तब से निरन्तर यह साहित्य अमर स्वामी प्रकाशन विभाग के अन्तर्गत छपता चला आ रहा है, इस पर काफी मुकदमें भी हुए उनको भी अमर स्वामी प्रकाशन विभाग ने ही झेला, और जीत हासिल की, आगे भी यह कार्य निरन्तर इसी तरह से चलता रहेगा आज डॉ. साहब इस असार संसार में नहीं हैं, परन्तु साहित्य के द्वारा वे हमेशा अमर रहेंगे।

निवेदकः

लाजपतराय अग्रवाल

(वैदिक मिशनरी)

सम्पादकीय



लाजपत राय अग्रवाल
(वैदिक मिशनरी)

प्रस्तुत पुस्तक बौद्ध मत पर आधारित एक प्रामाणिक पुस्तक है। जिसके अनेकों संस्करण पहले छप चुके हैं। परन्तु आज तक कोई भी कम्प्यूटराईज्ड होकर प्रकाशित नहीं हुआ था, हमारे पाठक प्रायः शिकायत करते थे कि इतनी महत्वपूर्ण पुस्तक को आप पुराने ढंग के लैटर प्रैस पर छपे संस्करण को ही पुनः मुद्रित करते रहते हैं, जिसे पढ़ने में काफी असुविधा का सामना करना पड़ता है। क्या ही अच्छा हो अगर आप इसे कम्प्यूटर पर तैयार करा दें तो हर दृष्टि से उत्तम रहेगा। काफी समय से यह विचार चल रहा था, परन्तु अत्याधिक व्यस्तता के

कारण यह कार्य पैंडिंग में पड़ा रहा, अन्तत: अन्य कार्य रोककर इस कार्य को करना उपयुक्त समझा गया, और इसके समस्त प्रमाणों का सही मिलान करते हुए इसे नई साज-सज्जा के साथ आखिर तैयार करा ही दिया।

हम अपने पाठकों के संज्ञान में लाना चाहते हैं कि अब डॉ. साहब का समस्त शेष साहित्य कम्प्यूटर पर तैयार हो रहा है, काफी कुछ तैयार होकर छप भी गया है।

आदरणीय डॉ. साहब के साहित्य पर किसी भी प्रकार की टीका-टिप्पणी करना कुछ ज्यादा ही हिम्मत का काम होगा, क्योंकि इनके लेखन में इसकी कहीं भी कोई गुंजायश ही नहीं रहती।

माननीय डॉ. साहब की लेखनी हर मत-मतान्तर पर चली, और उन्होंने सभी का सत्य-असत्य आर्य जनता के समक्ष प्रस्तुत किया। बहुत सी किताबों पर मुकदमें भी चले, परन्तु विपक्षियों को मुंह की ख़ानी पड़ी, और हर मुकदमें में डॉ. साहब की अप्रत्याशित जीत हुई। उसका एकमेव कारण सिर्फ यही रहा कि डॉ. साहब ने एक भी लाईन बिना प्रमाण के नहीं लिखी। प्रस्तुत पुस्तक में भी यही दृष्टिकोण अपनाया गया है। आप पढ़िये और लाभ उठाइये।

वैदिक धर्म का.....

लाजपतराय अग्रवाल

(वैदिक मिशनरी)

अनुक्रमणिका

क्र० सं०	विवरण	पृष्ठ सं०
१.	बौद्ध मत का भण्डाफ़ोड़	११
२.	ईश्वर के विषय में बुद्ध की अज्ञानता	१९
३.	बुद्ध जी भगवान के अवतार नहीं थे	२०
४.	किसी ग्रन्थ को स्वत: प्रमाण न मानना	३०
५.	बुद्ध का जीवात्मा को नित्य मानना	३१
६.	आत्मा के बारे में बुद्ध जी की कल्पनाएं– इस प्रकार हैं	३३
७.	बौद्ध मत में पुनर्जन्म क्यों और कैसे?	३८
८.	महात्मा बुद्ध के तप की गल्प (झूठी)– कथा	५८
९.	बुद्ध जी सिद्ध योगी नहीं थे	६०
१०.	बुद्ध जी की गप्पाष्टकों के कुछ नमूने	६३
११.	देवराज इन्द्र और बुद्ध के शिष्य की गल्प	६३
१२.	इन्द्र द्वारा गौतम प्रशंसा की गल्प	६४
१३.	इन्द्र बुद्ध से मिलने आया की गल्प	६५
१४.	इन्द्र का बुद्ध को अभिवादन करने की गल्प	६५

क्र० सं०	विवरण	पृष्ठ सं०
१५.	बुद्ध की गर्वोक्ति	६६
१६.	असम्भव आयु की गल्पें	६७
१७.	महाभूत और बुद्ध जी	६८
१८.	ऊटपटांग बौद्ध गणित का नमूना	६८
१९.	ददमूने की एक और गल्प	७०
२०.	बुद्ध के नाग दमन की गल्प	७१
२१.	शिवजी द्वारा बुद्ध की प्रशंसा करने- की गल्प	७५
२२.	बीस करोड़ बुद्ध सत्व बुद्ध के साथ थे	७७
२३.	तीस सहस्त्र करोड़ जिन्नों की गल्प	७७
२४.	पाँच सौ ऋषियों को एक घण्टे में- अर्हन्त अर्थात् सिद्ध बना देने की गल्प	७८
२५.	इसी प्रकार की एक गल्प और देखें	७९
२६.	बुद्ध के जन्म समय की गल्प	८०
२७.	बुद्ध जी के पूर्व जन्मों की याद की गल्पें	८२
२८.	बुद्ध और माँसाहार	८३
२९.	बौद्ध मत में चर्बी खाना जायज है	८४
३०.	बौद्ध मत में कच्चा माँस खाना व- खून पीना जायज है।	८४

क्र० सं०	विवरण	पृष्ठ सं०
३१.	पाखाना खाने की अनुमति	८५
३२.	स्वयं बुद्ध का माँस खाना	८५
३३.	बौद्धों को किस तरह का माँस खाना– विहित है? इसका स्पष्टीकरण	८६
३४.	जान-बूझकर सूअर का माँस खाने– का अन्य विवरण	८८
३५.	मृत्यु के बाद बुद्ध-शव की दाह– व्यवस्था बुद्ध द्वारा अपनी पूजा का विधान	८९
३६.	यज्ञों में पशुबलि	९०
३७.	प्रथम प्रमाण	९०
३८.	दूसरा प्रमाण–अजामेध व गौमेध की गल्प	९३
३९.	तीसरा प्रमाण–पाँच हजार मनुष्यों का– यज्ञशाला में वध वाली गल्प	९४
४०.	सहस्त्रों हजार गौओं के यज्ञ में वध– की गल्प	९५
४१.	बौद्ध धर्म ब्राह्मण विरोधी था	९८
४२.	बुद्ध जी के बौद्ध मत प्रचार के हथकण्डे	१०१
४३.	मद्य-माँस व मैथुन का खुला प्रचारक– बौद्ध मत था	१०३

क्र० सं०	विवरण	पृष्ठ सं०
४४.	बौद्ध धर्म और बिहार नामी इस ग्रन्थ–में निम्न लेख दिया है	१०६
४५.	बौद्धों के भैरवी चक्र का रूप	१०९
४६.	बौद्ध मत में चेला-चेली बनाने की–विधि	११२
४७.	स्त्रियों द्वारा बुद्ध की मूत्रेन्द्रियों की–वन्दना	११३
४८.	बौद्ध संघों में घोर व्यभिचार	११४
४९.	बौद्ध मत ने देश को नपुंसक बना दिया	११८
५०.	बौद्धों की देशद्रोहिता	११९
५१.	बौद्ध मत और इस्लाम का आक्रमण	१२०
५२.	शाक्यों की उत्पत्ति भाई-बहिन के–व्यभिचार से हुई	१२५
५३.	अमर स्वामी प्रकाशन विभाग द्वारा–प्रकाशित साहित्य की संक्षिप्त सूची	१२७

□□□

बौद्ध मत का भण्डाफ़ोड़

महात्मा बुद्ध का जन्म कपिलवस्तु के राजा शुद्धोधन के यहाँ अब से लगभग **२५००** वर्ष पूर्व हुआ था। उनकी माता का नाम मायादेवी था। राजा शुद्धोधन सूर्यवंशी राजपूत थे।

बुद्ध जी का पूर्व नाम **सिद्धार्थ** था। उनका विवाह हो चुका था। **२९** वर्ष की आयु में उन्होंने सन्यास ले लिया था। उनके सन्यास लेने से पूर्व उन्हें एक पुत्र भी हो चुका था।

बुद्ध जी की माता का उनके जन्म के एक सप्ताह बाद ही निधन हो गया था। बुद्ध जी का मन वैराग्य की ओर रहता था और वे प्रायः जन्म-मृत्यु के बन्धन से मुक्त होने का विचार किया करते थे।

सन्तान के जन्म के समय उन्होंने उसे बन्धन समझा और वे अनायास ही अपनी पत्नी और पुत्र को सोता हुआ छोड़कर तपस्या करने हेतु घर से चुपचाप निकल गये थे। अनेकों वर्षों तक उन्होंने एकान्तवास तथा तप किया था। कहते हैं कि इसी से उनकी आत्मा में प्रकाश हुआ था, और उन्हें बुद्धत्व की प्राप्ति हुई थी।

वे राजपुत्र थे। अतः तत्कालीन कई राजाओं का उन्हें बौद्ध मत के प्रचार में सहयोग मिला था। उनका मुख्य प्रचार क्षेत्र बिहार की भूमि रही थी। उनका मत उन दिनों देशभर

में खूब फैला था।

हिन्दुओं की छोटी जातियाँ इसमें अधिकता से शामिल होती गई थीं। ब्राह्मण, क्षत्रिय तथा वैश्य वर्ण के लोग इस मत के सदैव विरोधी रहे थे, क्योंकि बुद्ध जी हिन्दू मान्यताओं तथा परमात्मा की सत्ता एवं जीवात्मा की नित्यता के घोर विरोधी थे। वह वेदों व वैदिक सभ्यता के भी विरोधी थे।

महात्मा बुद्ध ने अपने मत के प्रचार के लिए अपनी मान्यताओं पर कोई ग्रन्थ नहीं लिखा था। जो भी बौद्ध साहित्य उपलब्ध है, वह उनके देहावसान के बाद उनके अनुयायियों द्वारा रचा गया है और उसका आधार भारतीय वैदिक साहित्य ही रहा है, जो भी नीति अथवा ज्ञान के उपदेश उन ग्रन्थों में बुद्ध की ओर से दिये गये हैं-वे सभी बाद में महाभारत तथा अन्य संस्कृत साहित्य के आधार पर लिखे गये हैं।

जो भी व्यवस्थाएं व नियम बौद्ध संघ संचालनार्थ बनाये गये थे, उन्हें बुद्ध से स्वीकृत कराया गया है। यथा-**मैं अनुमति देता हूँ।** चाहे वे उनके निधन के कितने ही समय बाद लिखे गये हों। समय-समय पर जब जैसी स्थिति सामने आती गयी, तदानुसार नियम बौद्ध विद्वानों द्वारा बनाये जाते रहे और बुद्ध की ओर से स्वीकृति की मोहर उन्हीं के नाम से लगायी जाती रही है।

बुद्ध को महान योगी सिद्ध करने के लिए अनेकों

कथानक गढ़े गये, उनमें बुद्ध के द्वारा योगिक चमत्कार दिखाने का वर्णन किया गया।

ब्राह्मणों को बदनाम करने के लिए उनसे शास्त्रार्थों की कपोल कल्पित कहानियाँ भी गढ़ी गयीं और ब्राह्मणों द्वारा अपनी पराजय की स्वीकृति दिखाकर व उनसे बुद्ध की प्रशंसा कराकर बौद्ध धर्म स्वीकार करना दिखाया गया है।

ब्राह्मणों द्वारा पूजित देवताओं को बौद्ध कथाओं में बुलाकर बुद्ध की स्तुति कराई गयी। बुद्ध जी के ही मुँह से अपने को ब्रह्मा से भी बड़ा घोषित कराया गया। इन्द्र-ब्रह्मा व विष्णु को नाटक के पात्रों के समान जब चाहे बौद्ध लेखकों द्वारा उन्हें अपने लेखों में बुला लिया गया और देवों के रूप में ही उनके सम्मान को धूल में मिलाने का यत्न किया गया है।

उनके द्वारा बुद्ध जी की परिक्रमा कराई गई तथा उनसे ही अभिवादन कराया गया एवं अपमानित करने के लिए उन देवताओं को एक ओर खड़ा कराया गया अथवा दूर बैठा दिया गया है। और यह सब कुछ ब्राह्मण विद्वेष तथा बुद्ध को सर्वोपरि महान व्यक्ति बनाने के लिए बौद्ध लेखकों द्वारा किया गया है, क्योंकि हिन्दू धर्म में इनकी पूजा परमात्मा के रूप में होती थी।

लोगों को मूर्ख बनाने के लिए बुद्ध द्वारा नरकों की आयु को असंख्यात वर्षों में वर्णन कराना, ९१ कल्पों, ९१ बार

सृष्टि की उत्पत्ति प्रलय तक से भी पूर्व के जन्मों की यादगार रखना आदि बातें स्वयं बुद्ध द्वारा कही हुई नहीं हो सकती और न अपनी महानता की गर्वोक्ति स्वयं बुद्ध द्वारा कही हुई हो सकती है।

लाखों गौओं का वध यज्ञ के निमित्त ब्राह्मणों द्वारा प्रेरित किये जाने पर राजा द्वारा किया जाने की बात भी बुद्ध द्वारा कही हुई नहीं मानी जा सकती है, जो कि असम्भव कपोल-कल्पना है।

यदि उन्होंने ही कही थी तो वे बे-सिर-पैर की बातें थी स्वयं पशुओं का माँस खाने वाले बुद्ध जी द्वारा वैदिक आर्य शास्त्रों का समर्थन करना हास्यास्पद बात बन जाती है, क्योंकि वैदिक धर्म का आधार ही अहिंसा व सत्य पर आधारित है। योगी बिना यम-नियमों के पालन का अभ्यास किये हुए तथा ये माँसाहारी लोग नहीं बन सकते हैं। बुद्ध जी स्वयं माँसाहारी थे, अतः वे योगी नहीं हो सकते थे।

मांसाहार जो तामसिक एवं राक्षसी आहार है। योगी सात्विकी वृत्ति वाले ही बन सकते हैं। भारतीय ब्राह्मण योगियों के समकक्ष लाने के लिए उन्हें ऋद्धि-सिद्धि सम्पन्न व्यक्ति बताया गया है।

योगी कभी भी यौगिक सिद्धियों को बाजीगरों की तरह सर्वत्र प्रदर्शित नहीं किया करते, जैसा कि जादू पर आधारित चमत्कारिक प्रदर्शनों के माध्यम से बुद्ध द्वारा लोगों को अपने

सम्प्रदाय में खींचने की घटनायें बौद्ध लेखकों ने लिखी हैं।

बुद्ध जी के समकालीन जैन मत का भी प्रचार हो रहा था। दोनों ने ही लोगों को गुमराह करने के लिए तीर्थंकरों की लम्बी-लम्बी आयु की गल्पें ठोकी हैं। नरकों की आयु की भी बेतुकी कल्पनायें उनके द्वारा बनाई हुई दोनों के साहित्य में बेशुमार भरी पड़ी हैं।

जैनियों ने स्त्रियों को अपनी सभाओं में शामिल किया था, तो आनन्द ने भी बुद्ध के समर्थन में भिक्षु संघों में उनका प्रवेश खोल दिया, जिसका परिणाम बुद्ध जी के सामने ही संघ में व्यभिचार के रूप में आ गया था।

भारत में मंत्रयान-तंत्रयान, मद्यपान, मांसाहार एवं व्यभिचारयान का व्यापक प्रचार इस बौद्ध धर्म के द्वारा ही किया गया। भारतीय जनता को ईश्वर विश्वास से हटाकर मनुष्य परस्त इसी सम्प्रदाय द्वारा बनाया गया।

वर्णाश्रम व्यवस्था का विरोध करके देश को क्षात्रत्व से रहित, वीरता विहीन यहाँ तक इन बौद्धों ने बना दिया था कि मुगलकाल में मात्र दो सौ यवन लुटेरों का सामना करने वाले वीर भी सारे बिहार प्रदेश में न मिल सके थे।

बुद्ध जी का दार्शनिक ज्ञान अत्यल्प था। ईश्वर जीव प्रकृति, मोक्ष, पुनर्जन्म आदि के किसी भी प्रश्न को बौद्धों की किसी भी पुस्तक में छुआ तक नहीं गया है। किसी बौद्ध उपदेश में इनका उल्लेख तक नहीं मिलता है, जबकि ये

स्वभाविक विषय हैं, जिन पर सभी के दिलों में जानने की जिज्ञासा सदैव उठा करती है।

बुद्ध जी केवल वर्तमान की बात सोचते थे। कल क्या होगा? इस पर उन्होंने कभी विचार ही नहीं किया। इन गहन विषयों पर केवल भारत के प्राचीन महर्षियों ने ही विचार किया है और बुद्धिगम्य तर्कों द्वारा प्रकाश भी डाला है।

वेदों में जिनकी गति न हो, वैदिक साहित्य के विरोध करने की जिन बौद्धों ने कसम खा रखी हो, वे तो सदैव सत्य के विरूद्ध ही उपदेश करेंगे और वैसा ही उन्होंने किया है।

लाखों-करोड़ों वर्षों के अनुभव सिद्ध भारतीय ऋषियों के अगाध वैदिक ज्ञान का सहारा लिए बिना,जोश में नया सम्प्रदाय चलाने की धुन में जो अनर्थ भारतीय ज्ञान की उपेक्षा के कारण बुद्ध जी से हुआ था। उसने इस प्राचीन देश की सभ्यता एवं संस्कृति को भारी ठेस पहुँचाई थी। श्रेष्ठ मस्तिष्क के लोग द्विज वर्णों के सदैव बौद्ध विचारधारा के विरोधी रहे थे।

भारतीय संस्कृत धार्मिक साहित्य में जितना भी मांसाहार तथा ऋषियों के निष्कलंक जीवन-चरित्रों में चरित्र भ्रष्टता के स्थल मिलते हैं। वे सभी वाममार्गीय बौद्धों की ही मिलावटें हैं श्राद्धों में मांसाहार व व्यभिचार की कहानियाँ पुराणों व स्मृतियों में वाममार्गीय बौद्धों ने ही श्लोक बना-बनाकर घुसेड़े हैं।

गौ-वध व गौमांस भक्षण की गन्दी बातें भी गौपूजक ब्राह्मणों अथवा वैदिक धर्मियों द्वारा जोड़ी जाना कल्पना के भी बाहर की बातें हैं।

हमने जब तक बौद्ध साहित्य को नहीं देखा था, हम इन मिलावटों को पौराणिक वाममार्गीयों की मिलावटें मानते व लिखते थे, पर अब बौद्ध साहित्य के अहगाहन से हम स्पष्ट रूप में समझते हैं कि वे वाममार्गीय लोग केवल ये बौद्ध ही थे, जो इतना दु:साहस कर सकते थे, क्योंकि मांस भक्षण एवं व्यभिचार उनके धर्म का प्रमुख अंग था, जिसका घोर प्रचार बौद्ध धर्म के अनुयायियों द्वारा किया गया था।

संसार मानता व जानता है कि आर्य जाति के पूर्वज महान व पवित्र होते थे। सभी ऋषि, महर्षि, योगीगण दिव्य शक्ति सम्पन्न होते थे। खान-पान में पूर्ण सात्विक एवं प्राणीमात्र के कल्याण में रत व ईश्वर में तन्मय रहते थे।

उनके चरित्रों पर कभी कोई आक्षेप कर ही नहीं सकता था और इसीलिए उनके तप और त्याग के एवं विशेष आध्यात्मिक ज्ञान के आधार पर उनको लोक में समादर मिलता था। वे सुअर का मांस खाने वाले गौतम बुद्ध की तरह हिंसक व मांसाहारी नहीं होते थे।

वैदिक महापुरुष राम-सीता, कृष्ण व ऋषिगण सर्वथा निष्कलंक थे, क्योंकि उनको लोक से समादर प्राप्त था।

बौद्धों ने ही उनको हिन्दू धर्म से द्वेष के कारण बदनाम

किया था और आज भी अनेक धूर्त बौद्ध लोग लखनऊ व झींझक से ही उन्हें बदनाम करने के लिए भ्रष्ट मिथ्या पुस्तकें लिख रहे हैं, जिनमें आर्य जाति व उसके पूर्वजों को गालियां दी गयी हैं।

यदि बौद्ध लोग अपने पूर्वज रावण, कंस आदि असुर और राक्षसों को मानने लगेंगे, तो वैसे ही उनके आचार-विचार व सन्तानें क्यों न बनेंगी?

उनके सामने कोई ऊँचा आदर्श चरित्रों की दृष्टि से नहीं रहेगा, जिसके अनुकरण की शिक्षा वे बच्चों को दे सकेंगे। जिस कौम के पूर्वज, आदर्श चरित्र वाले नहीं होते, उसका इतिहास भी पतित लोगों का बन जाता है और वह कौम मर जाती है।

भारतीय आर्य जाति के पूर्वज संसार में सर्वश्रेष्ठ थे, जिनकी तुलना में कोई भी विश्व का धर्म अपना महापुरुष खड़ा नहीं कर सकता है। माता-सीता की समता विश्व की कोई भी नारी नहीं कर सकती है।

बौद्धों! क्या तुम मांसाहारी-हिंसक और सुअर का मांस खाने वाले को अपना पूर्वज मानने में लज्जा अनुभव नहीं करते हो? जबकि उस सुअर का भोजन केवल मनुष्य का पाखाना होता है।

आज भी कोई बुद्धिमान व्यक्ति बौद्ध मत में जाना पसन्द नहीं करता है, क्योंकि यह आचारवान धर्म नहीं है। केवल

अशिक्षित लोग ही हिन्दुओं की आपसी छुआ-छूत के कारण भ्रमवश बौद्ध मत में चले जाते हैं। पर आगे उनको भी पछताकर पुनः वापिस आना पड़ेगा। जिस मत में आचार-विचार की कोई मर्यादा न हो, वह बहुत समय तक जीवित नहीं रह सकता है।

ईश्वर के विषय में बुद्ध की अज्ञानता

जिस मत के प्रवर्तक को विश्व रचयिता परमात्मा का भी आभास जीवन में न हो सका, नाना प्रकार की सृष्टि की सामग्री को देखकर, जो उसके कर्त्ता को भी न समझ सका, जो अनन्त विश्व की व्यवस्था को देखकर यह भी अनुमान न लगा सका कि इसका भी कोई व्यवस्थापक है।

मानव शरीर की अत्यन्त ज्ञान-विज्ञान पूर्ण रचना को देखकर भी जो यह न सोच सका कि इसका निर्माण माता के गर्भ में बिना किन्हीं औजारों के किसी गर्भ में व्यापक सत्ता द्वारा नियम पूर्वक होता है, तो कोई सत्ता विश्व के निर्माण में निमित्त अवश्य होनी चाहिए, जिसकी कारीगरी मानव बुद्धि की समझ से परे की बात है।

तो वह व्यक्ति धर्म प्रवर्तक बनने की योग्यता नहीं रख सकता है। पता नहीं जिस बुद्ध को प्रभु की सत्ता पर भी विश्वास नहीं था, जिसने अपने जन्मदाता को कभी सिर नहीं झुकाया, उसे धर्म प्रवर्तक कैसे मान लिया गया?

बुद्ध जी भगवान के अवतार नहीं थे

पुराणों में जो २४ अवतारों की सूची दी गयी है, उनमें बुद्ध को भी अवतार लिखा गया है। यह भी बौद्धों की ही स्पष्ट मिलावट है।

वरना वेद विरोधी, ईश्वर व जीवात्मा की सत्ता को न मानने वाला, वैदिक कर्मकाण्ड का शत्रु, घोर मांसाहारी, नास्तिक सम्प्रदाय के बुद्ध जैसे प्रवर्तक को ईश्वर का अवतार कैसे कोई ब्राह्मण लिख व मान सकता था? जो स्वयं ब्राह्मणत्व का घोर विद्वेषी भी था। इस सम्बन्ध में पुराण के निम्न श्लोक दृष्टव्य हैं–

बलिना प्रषितों भूमौ मयः प्राप्तौ महासुरः।
शाक्य सिंह गुरुर्गेयो बहुमाया प्रवर्तकः ॥३०॥

स नाम्ना गौतमाचार्यो दैत्य पक्ष विवर्धकः।
सर्व तीर्थेषु ते नैव यन्त्राणि स्थापितानिवै ॥३१॥

तेषांमधो गता ये तु बौद्धाश्चासन्समन्ततः।
शिखा सूत्रविहीनाश्च वभूवुर्वर्ण संकराः ॥३२॥

दशकोट्यः स्मृता आर्या बभूबौद्ध मार्गिणा ॥३३॥

(भविष्य पुराण खण्ड ४, अध्याय २१)

अर्थ–बलि ने पृथ्वी पर एक बहुत माया प्रवर्तक महान असुर को भेजा, जो शाक्यसिंह के मार्ग से विख्यात हुआ। उसे गौतम आचार्य भी कहते हैं। वह दैत्यों के पक्ष को बढ़ाने

वाला था। उसने सभी तीर्थों में अपनी संस्था स्थापित् की।

उसके मतानुयायी चोटी-जनेऊ से हीन एवं नीच गति को प्राप्त होकर वर्णसंकर हो गये। दस करोड़ आर्य बौद्धमार्गी बन गये।

इस पुराणकार ने बौद्धों को दैत्य पक्ष को बढ़ाने वाला ठीक ही लिखा है। वह वस्तुतः कपिलवस्तु का सिद्धार्थ बनकर लोगों को भ्रम में डालकर वैदिक मर्यादाओं के विरोधी थे।

जब बौद्ध मत का देश में विरोध होने लगा तो बौद्धों ने पुराणों की अवतार सूची में बुद्ध जी का नाम भी घुसेड़ कर उन्हें पौराणिक अवतार बना दिया, ताकि विरोध शान्त हो जाये व पौराणिक भी उन्हें मान्यता दे देवें।

उस समय आजकल की तरह प्रेस नहीं होते थे अतः मिलावटी नाम का पता आसानी से नहीं लग पाता था और आज भी वही मिलावटी नाम बुद्ध का अवतारों की सूची में भागवत पुराण के अन्दर लिखा चला आ रहा है।

किसी ने सोचा तक भी नहीं कि दैत्य पक्ष समर्थक, वेद विरोधी, नास्तिक, महात्मा बुद्ध, परमात्मा का बौद्ध अवतार कैसे बन सकता है? जबकि ये अवतार वेदमत समर्थक आस्तिक होने चाहिये। कोई भी ईश्वर भक्त ब्राह्मण, नास्तिक मत प्रवर्तक बुद्ध जी को ईश्वरावतार लिख ही नहीं सकता था। यह सिद्धान्त का प्रश्न है।

संसार में जितने भी पदार्थ उत्पन्न हुए हैं, होते हैं व होंगे, उनका निर्माण किसी न किसी सत्ता के द्वारा होता है। संसार के प्रत्येक कार्य में–निमित्त, उपादान व साधारण तीन कारण होते हैं।

कुम्भकार घड़ा बनाता है, वह बनाने वाला निमित्त कारण होता है। मिट्टी से घड़ा बनाता है, मिट्टी उपादान कारण होती है। चाक आदि साधन होने के कारण साधारण कारण होते हैं। यदि कुम्भकार न हो तो मिट्टी स्वयं घड़ा नहीं बनेगी। मिट्टी न होगी तो कुम्भकार घड़ा किससे बनायेगा? चाक आदि भी घड़ा बनाने में सहयोगी न हो तो घड़ा ही नहीं बनेगा।

इसी प्रकार जितने भी बने हुए पदार्थ संसार में हैं, सभी के निर्माण में निमित्त व उपादान कारण अनिवार्य होते हैं। कोई भी बना हुआ पदार्थ, पदार्थों व परमाणुओं के संयोग से बनता है। संयोग यदि नियमपूर्वक होता है तो कर्त्ता बुद्धिमान होता है।

यदि निर्माण में नियम कर्त्ता है तो नियम उसके बुद्धिमान नियन्ता का प्रमाण होता है। कर्त्ता प्रत्यक्ष हो या अप्रत्यक्ष हो, पर कारीगरी उसकी सत्ता और कौशल का पता देती है।

मकान को देखकर कोई भी यह नहीं मानेगा कि ईंट स्वयं बनकर, भट्ठे में पककर उड़कर चली आयी। मिट्टी का गारा स्वयं बनकर तैयार हो गया। ईंट स्वयं एक पर एक

लगती गयी व गारा स्वयं चिपकता गया और मकान की दीवारें, छत, जंगले, रोशनदान व अलमारियाँ बिना राज-मजदूरों के स्वयं बनकर तैयार हो गयीं, कोई मकान पूरा बनकर खड़ा हो गया।

प्रेस में टाइप स्वयं बिना कम्पोजीटर व मशीनमैन के लाइन में लग गया और किताबें बिना आदमी की व्यवस्था के छप, बँध व कटकर तैयार हो गयीं। ऐसी बात कोई भी नहीं मानेगा। मूर्खों की बात दूसरी है।

हम जगत में प्रत्येक पदार्थ की उत्पत्ति में नियम देखते हैं। उस उत्पन्न पदार्थ की ज्ञानपूर्वक निर्मित्त आकृति देखते हैं, जो उसके नियन्ता के मस्तिष्क एवं ज्ञान की द्योतक होती है। नियम बिना नियामक के नहीं होते हैं।

नीम व गुलाब के पत्तों की एक ही प्रकार की आकृति उनमें विद्यमान अनेक गुणों से पूर्ण रस, अनार के फल के ऊपर का कठोर छिलका, अन्दर झिल्लियों की उपस्थिति में बीजों का निर्माण, उनके ऊपर अनेक गुणों से युक्त सुस्वाद रस उनके अन्दर गुठली, गुठली के अन्दर गूदा और रस उस गूदे में पुनः पूरे वृक्ष को उत्पन्न करने की क्षमता। क्या यह बिना किसी व्यापक एवं ज्ञानवान सत्ता के निर्जीव वृक्ष से स्वयं हो जाता है?

संसार के सारे मानव मिलकर एक नीम का पत्ता भी नहीं बना सकते। बालों का निर्माण सिर पर कैसे होता है, यह भी

कोई नहीं जान पाता है। माता के गर्भ में बालक के शरीर का निर्माण कौन और कैसे करता है? यह स्वयं माता भी नहीं जान पाती है। पर बुद्धिमान व्यक्ति जानते हैं कि जिन पदार्थों का निर्माण अन्दर से होता है, उनमें निर्माण करने वाली ईश्वरीय सत्ता अन्दर व्यापक होती है। ऐसे सभी पदार्थ ईश्वरीय निर्माण क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं।

जब जीवों के कार्य क्षेत्र में कोई कार्य बनी हुई वस्तु बिना चैतन्यकर्त्ता के नहीं बन सकती है, तो प्राकृतिक देवी कार्य क्षेत्र में कोई वस्तु बिना ईश्वर के निमित्त कर्त्ता के नहीं पैदा हो सकती है।

बुद्धिगम्य बात है, जो बुद्ध जी नहीं समझ सके थे और जिन पदार्थों का निर्माण बाहर से होता है, उनका निर्माण क्षेत्र जीवों का होता हैं। जैसे मकान, घड़ा, घोंसला आदि अन्दर से विकसित होने वाले पदार्थ ईश्वरीय कार्य क्षेत्र में पैदा होते हैं।

संसार में जितने भी धर्म प्रचारक व महान व्यक्ति हुए हैं, सभी ईश्वर विश्वासी तथा ईश्वर भक्त व आस्तिक लोग हुए हैं। केवल बुद्ध व जैन दो ही अनीश्वरवादी व नास्तिक धर्म प्रवर्तक हुए हैं, जिन्होंने ईश्वर की सत्ता को न मानकर स्वयं को ही ईश्वर घोषित किया था।

अल्पज्ञ और अल्प शक्तिवान एकदेशीय मानव स्वयं को ही ईश्वर बताये, इससे बड़ी मूर्खता क्या होगी? विश्व के

कण-कण में अनन्त विश्व में प्रतिक्षण होने वाली ज्ञानपूर्वक नियमबद्ध होने वाली रासायनिक वैज्ञानिक क्रिया परमेश्वर की सर्व-व्यापकता और अनन्तता की घोषणा कर रही है।

शून्याकाश में प्रतिक्षण गतिशीलता निराधार स्थित सूर्य, चन्द्र, ग्रह, उपग्रह, लोक-लोकान्तर, अनन्त आकाशीय पिण्ड करोड़ों सूर्य ये आपस में टकरा क्यों नहीं जाते हैं? किस सर्वशक्तिमान सत्ता के अधिकार में स्थित ये अपनी कक्षाओं में ही रहते हैं।

नियमबद्ध रूप से जिस उद्देश्य से ये बनाये गये हैं, अपना उद्देश्य पूरा कर रहे हैं। अनन्त आकाश में स्थित सहस्त्रों आकाश गंगायें और उनमें से प्रत्येक आकाश गंगा में अरबों-खरबों तारे व असंख्य सूर्य क्या ये सब बुद्ध जी के इशारे पर स्वयं बनकर चल रहे हैं?

कैसा ज्ञानी था बौद्ध मत का प्रवर्तक, जिसे इन सबको देखते हुए भी ईश्वर की सर्व-व्यापक सत्ता का आभास तक न हुआ और कैसे अन्धे हैं, उसके अनुयायी कि वे नास्तिक धर्म में फँसकर अपना जीवन बर्बाद कर रहे हैं।

वे लोग कहते हैं कि यदि ईश्वर सर्व-शक्तिमान है तो वह जगत रचने के लिए प्रकृति अर्थात् माद्दे का मोहताज क्यों है?

हमारा उत्तर है कि मौहताजी किसी वस्तु के अभाव में होती है। प्रकृति अर्थात् जगत बनाने की सामग्री परमाणु रूप

से जगत रचना से पूर्व विद्यमान थी और ईश्वर के साथ शून्य आकाश में सदैव विद्यमान रहती है।

ईश्वर जीव और प्रकृति ये तीन अनादि सत्तायें हैं। जीवों के लिए प्रकृति से जगत रचना करना, जीवों को कर्म करने और पुरूषार्थ पूर्वक आनन्द भोग का अवसर देना यह अनादि नियम है। इसमें कोई आक्षेप नहीं बनता है।

बौद्ध कहते हैं कि जगत को ईश्वर ने बनाया तो फिर उस ईश्वर को किसने बनाया?

उत्तर होगा- अनादि सत्ता को बनाना नहीं होता है। जो बना होता है, उसी का बनाने वाला होता है। यदि जीवात्मा और परमात्मा ये दोनों बने हुए होते तो वे नाशवान भी होते।

तब बुद्ध जी ९१ कल्प (सृष्टि उत्पत्ति और प्रलय का एक कल्प होता है) पूर्व तक वे अपने सैकड़ों जन्मों की बात कैसे बता सकते थे और वे इतने पहले से कैसे मौजूद थे, जैसा कि उन्होंने स्वयं कहा है।

उनको ९१ कल्प पूर्व से आज तक जन्म-मरण के चक्र में किसने डाल रखा था? तो जब तक किसी वस्तु को बनी हुई साबित नहीं किया जायेगा, तब तक उसके बनाने वाले का प्रश्न ही पैदा नहीं होगा। यह भी प्रश्नकर्त्ता को जानना चाहिए कि ईश्वर आदि कारण है और आदि कारण कोई कारण नहीं होता है।

बुद्ध जी जैसे बुद्धिमान व्यक्ति की समझ में यह बात

क्यों नहीं आई कि इतना बड़ा अनन्त विश्व, अनन्त लोक-लोकान्तर और विश्व में फैला हुआ प्राणी जगत विश्व में विद्यमान नियम व व्यवस्था के बिना नियामक व व्यवस्थापक के कैसे चल रहा है?

व्यवस्था बिना व्यवस्थापक के बन नहीं सकती है। बुद्ध जी ने जो **३६३** बार जन्म इस जन्म से पूर्व लिए थे, जिनमें उनको घोड़ा, हाथी, मछली, चीता, हिरन, मुर्गा, मेंढक आदि बनना पड़ा था।

वह किन कृत कर्मों का दण्ड भुगतने के लिए और किस प्रबल सत्ता ईश्वर की व्यवस्था से हुआ था? वे एक ही जन्म में करोड़ों साल तक जिन्दा क्यों न रह सके थे तथा इस जन्म में भी वह हजारों साल तक जिन्दा न रहकर केवल अस्सी साल तक ही क्यों जीवित रहे थे? और उसमें भी जवानी से बुढ़ापा उन पर क्यों आ गया था? वे पेट की बीमारी से पीड़ित होकर कैसे मर गये, जबकि वे ही स्वयं ब्रह्म बनने का दावा करते रहते थे तथा उनके अन्ध-भक्त उन्हें ईश्वर मानते थे।

सच्चाई यह है कि सभी जीवात्मा अपने कर्मों के अनुसार आवागमन के चक्र में घूमते रहते हैं। बुद्ध जी भी साधारण मनुष्य थे और वृक्ष, पशु-पक्षी, तथा मनुष्यों की योनियों में अनादि काल से औरों की तरह आवागमन के चक्र में बार-बार जन्म लेते व मरते रहते थे।

इस जन्म में उनको वैराग्य हो गया था। वे साधु बन गये थे और अपनी बुद्धि के अनुसार एक नवीन मत के प्रवर्तक बन गये थे। राज्यकुल में जन्म हो जाने से, संस्कृत विद्या के न जानने से वे वैदिक शास्त्रों को नहीं पढ़ सके थे। अत: स्वभाविक ज्ञान के आधार पर अपनी तीक्ष्ण बुद्धि से जैसा भी उन्होंने ठीक समझा वैसा ही जनता के कल्याण के लिए उपदेश जीवनभर देते रहे थे। निज मत में आकर्षित करने के लिए भूत-प्रेत, देवी-देवता चमत्कार आदि की काल्पनिक गलत मान्यताओं का भी उन्होंने समर्थन किया।

मांसाहार को भी विहित बतलाया क्योंकि जनता उन गन्दी बातों की समर्थक थी। यदि वे इनका निषेध करते तो लोग उनके मत में नहीं आते। खासकर अशिक्षित व गरीब लोग उनके प्रभाव में आते रहे।

उन्होंने ब्राह्मणवाद का विरोध करते हुए भी ब्राह्मणों का अपने मत को विकसित करने व प्रचार में सहयोग लिया, क्योंकि संस्कृति विद्या तथा वैदिक शास्त्रों पर उनका अध्ययन व अधिकार होता था तथा जनता भी ब्राह्मणों पर विश्वास करती थी।

उन्हीं ब्राह्मणों द्वारा जो बुद्ध समर्थक बन गये थे। बौद्ध शास्त्रों की रचना बुद्ध के निधन के बाद बौद्धमत के प्रचार के लिए की गयी जो आज बौद्धमत की आधारशिला बने हुए हैं। स्वयं बुद्ध ने कोई पुस्तक स्वमत के सिद्धान्तों पर नहीं

लिखी थी।

सारा बौद्ध साहित्य बाद में बुद्ध की प्रशंसा में लिखा गया है और जो भी उपदेश उसमें हैं, वे बुद्ध जी के नाम से उनके ब्राह्मण शिष्यों द्वारा बौद्ध शास्त्रों के आधार पर गढ़े गये हैं।

वास्तव में बुद्ध ने क्या कहा था? इसका कोई प्रमाणिक संग्रह नहीं है। जिन ग्रन्थों में बुद्ध के उपदेश लिखे हैं, उनमें बेतुकी गल्पों का भी संग्रह है, जो कि हमारी दृष्टि में बुद्ध जी द्वारा कही गयी नहीं हो सकती हैं, जबकि वे उन्हीं के वचनों के रूप में लिखी गयी हैं।

बौद्ध शास्त्रों पर बुद्ध वचन के रूप में अविश्वास करने का यह पुष्ट आधार है। यदि कुछ ब्राह्मण विद्वानों द्वारा बुद्ध जी को सहयोग न दिया गया होता तो बौद्धमत कायम भी नहीं हो सकता था। परन्तु खेद है आज के अज्ञानी लोग जो बौद्धमत में घुस बैठे हैं। वह ब्राह्मणों को ही गालियाँ देते हैं, जबकि सारे ही बौद्ध मत वालों को ब्राह्मण वर्ग का कृतज्ञ होकर उनके विद्वानों के पैर धो-धोकर पीने चाहियें।

बुद्ध जी के गलत बौद्धमत को विकसित करने वाले प्रमुख रूप में ब्राह्मण ही थे। सारिपुत्र, महा मौद्धगल्यायिन, महाकाश्यप, रैवत् मौगलिपुत्र, तिष्य, नागसैन, नागार्जुन, अश्वघोश, असंग वसुबन्धु, बौद्धघोष आदि।

बुद्ध जी स्वयं प्रचार के लिए इन पर निर्भर रहते थे।

सारा बौद्ध साहित्य इन्हीं जैन विप्र-ब्राह्मण बौद्धों का लिखा हुआ है, जो बुद्ध जी के वकील थे।

किसी ग्रन्थ को स्वतः प्रमाण न मानना

बौद्ध मत की यह मान्यता भी सत्य नहीं है। मनुष्य जाति के सहस्त्रों अनुभवों के आधार पर जो सत्य निष्कर्ष निकलते हैं, उनको यदि संग्रह करके ग्रन्थ बना दिया जाये तो क्या वे ग्रन्थ स्वतः प्रमाण नहीं होंगे।

चिकित्सा शास्त्रों में ऐसे ही सहस्त्रों रोगों के प्रयोग दिये गये हैं और उनके प्रभाव, जो उनमें लिखे हैं, वे कसौटी पर कसने पर परीक्षणों में यथावत् सत्य सिद्ध होते हैं, तो क्या वे ग्रन्थ स्वतः प्रमाण नहीं माने जायेंगे।

यदि परीक्षणों द्वारा यह जान लिया गया है कि विष खाने से स्वास्थ्य का विनाश एवं प्राणान्त तक हो जाता है और जिन ग्रन्थों में यह सत्य लिखा हो और कोई व्यक्ति जो किताबों को स्वतः प्रमाण न मानता हो, वह स्वयं विष खाकर अनुभव करने में ही प्राण दे बैठे तो क्या उसे मूर्ख नहीं माना जायेगा?

जिन ग्रन्थों में सब सत्य ही सत्य लिखा हो, विज्ञान तर्क-अनुभव एवं परीक्षणों द्वारा जिन वेदों की एक भी बात असत्य सिद्ध न की जा सके, क्या वे स्वतः प्रमाण नहीं माने जायेंगे?

यदि कोई भी ग्रन्थ या महापुरुष प्रमाणिक नहीं है, तो बुद्ध जी के उपदेशकात्मक ग्रन्थ भी अप्रमाणिक क्यों नहीं माने जायेंगे?

किसी भी ग्रन्थ को प्रमाणिक न मानना तो स्पष्ट नास्तिकता व कुतर्क है। यदि बौद्ध मत के लोग धम्मपद व त्रिपटकों सुत्त निकायों व जातकों को अप्रमाणिक मानने लगेंगे तो बौद्ध सम्प्रदाय ही समाप्त हो जायेगा।

हाँ! बुद्धि, विज्ञान, सृष्टि नियम तथा सत्य के विरूद्ध जिसमें वर्णन हो, वह ग्रन्थ अथवा उस प्रकार की बात कहने वाला व्यक्ति कभी भी विश्वास के योग्य नहीं होना चाहिए।

बुद्ध का जीवात्मा को नित्य मानना

बौद्ध मत जीवात्मा के बारे में अत्यन्त भ्रमित है। वह उसे चैतन्य-अनादि और अनन्त सत्ता नहीं मानता है। स्वयं पंचतत्वों के संयोग से उत्पन्न उसकी सत्ता मानता है। किन्तु यह मानता है कि वह कुछ समय तक शरीरान्तोपरान्त भी बनी रहती है। उसके मतानुसार मन व जीवात्मा एक दूसरे के पर्यायवाची हैं। किन्तु हम बौद्ध साहित्य में बुद्ध के ही लिखे हुए शब्द देखते हैं। गौतम बुद्ध ने कहा है कि देखिये-

हे वत्स! मैं जब चाहता हूँ, अनेक किये पूर्व निवासों अर्थात् पूर्व जन्मों को स्मरण कर सकता हूँ, जैसे एक जाति अर्थात् जन्म इस प्रकार आकार अर्थात् शरीराकृति

नाम के सहित अनेक पूर्व जन्मों को स्मरण करता हूँ।

भो गौतम! है कोई आजीवक जो मरने पर स्वर्गवासी हो? वत्स! यहाँ से ९१ कल्प तक मैं स्मरण करता हूँ, किसी को भी स्वर्ग जाने वाला नहीं जानता, सिवाय एक के और वह भी कर्मवादी अर्थात् क्रियावादी था।

(मज्झिमनिकाय पृष्ठ २७९-२८०)

यह प्रमाण यह बताता है कि जीवात्मा अनादि, अनन्त सत्ता है, वह नाशवान नहीं है। गौतम बुद्ध ने भी सहस्त्रों जन्म धारण किये थे। चाहे सत्य हो या गलत पर उनके कथनानुसार उनको ९१ कल्प तक के लोगों के पूर्व जन्मों का पता था, अर्थात् वे ९१ कल्प पूर्व भी मौजूद थे और तब भी जन्म धारण किया करते थे।

यदि जीवात्मा मन का ही नाम होता तो वह तो कभी का नष्ट हो जाता, क्योंकि उत्पन्न होने वाला पदार्थ नाशवान होता है।

बुद्ध ने ९१ पूर्व कल्पों तक स्मरण करने की बात कही है और स्मरण वही बात की जा सकती है, जिसे व्यक्ति भूल गया हो तथा जिसके प्रत्यक्ष संस्कार उसके मस्तिष्क में मौजूद हों। इसका अर्थ है कि ९१ बार सृष्टि उत्पन्न होकर नष्ट होने से पूर्व भी बुद्ध जी किसी मानव शरीर में पृथ्वी पर मौजूद थे और उनकी आत्मा लगातार जन्म-मरण के चक्र में घूमती रहती थी।

एक सृष्टिकाल चार अरब, बत्तीस करोड़ साल का होता है और इतने ही समय का एक प्रलय काल होता है, जिसे एक कल्प कहते हैं। हिसाब लगाकर देखें कि ९१ कल्पों में कितने वर्ष बीत गये। उससे पहले जीवात्मा की विद्यमानता बुद्ध भी मानते थे। इस प्रकार उनके मत से जीवात्मा उत्पत्ति विनाश रहित अनादिधर्मी स्वयं सिद्ध है।

वास्तविक बात यह है कि जीवात्मा के बारे में बुद्ध जी को विशेष ज्ञान नहीं था। वे उसके स्वरूप के बारे में भी नहीं जानते थे इसलिए वे इस गहन विषय पर सदैव मौन रहते थे और दार्शनिक विषयों में उलझना पसन्द नहीं करते थे।

आत्मा के बारे में बुद्ध जी की कल्पनाएं इस प्रकार हैं

उन्होंने किसी नित्य आत्मा के अस्तित्व को असिद्ध कर दिया। उनका तर्क था कि ऐसी आत्मा, प्रभु और ईश्वर क्या अपने को सांसारिक दुःखों में डालेगा। अतएव न कोई कर्त्ता है और न ही कोई ज्ञाता, न कोई प्रभु और न ही कोई आत्मा।

उन्होंने समझा था कि इन्द्रियाँ तथा उनके इन्द्रियार्थों के सम्पर्क से संस्कारों की उत्पत्ति होती है। वे संस्कार तृष्णा बीज के जनक हैं। इस तृष्णा बीज से जो अंकुर उत्पन्न होता

है, वह स्वयं न बीज है और न बीज से भिन्न ही है। यही सत्य है।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास पृष्ठ ६१)

बौद्ध लोग नित्य आत्मा को स्वीकार नहीं करते। इस कारण उन्हें यह भी स्वीकार्य नहीं है कि जो कार्य करता है, वही फल भोगता है, अथवा जो कर्म करता है, उसके अतिरिक्त कोई अन्य उसका फल भोगता है।

उनका कथन है कि प्रत्येक व्यक्ति एक निरन्तर प्रवाह की स्थिति में है, अर्थात् उसके पाँचों स्कन्द रूप, वेदना, संज्ञा, संस्कार और विज्ञान जिससे वह बना हुआ है, प्रतिक्षण परिवर्तित हो रहे हैं।

इसलिए यह कहना ठीक नहीं हो सकता कि जो व्यक्ति कर्म करता है वही उसका फल भोगता है, जिस व्यक्ति ने कर्म किया वह तो वस्तुत: उस कर्म का फल होने के समय तक वही व्यक्ति रह ही नहीं गया। प्रतिक्षण परिवर्तन होने के कारण वह परिवर्तित हो गया, यद्यपि वह पहले से सर्वथा भिन्न व्यक्ति हो गया।

पाँच स्कन्धों के अतिरिक्त देही के भीतर आत्मा नाम का कोई छठा तत्व नहीं है। ये पाँच स्कन्ध संगठित होकर देहधारी का निर्माण करते हैं तब वे उपादान स्कन्ध बन जाते हैं।

स्कन्धों का यह संगठन किसी सृष्टिकर्त्ता ईश्वर की

इच्छा या प्रेरणा से नहीं परन्तु कारण परम्परा के सिद्धान्त के अनुसार होता है, जैसे वन में उगे वृक्ष से वृक्ष की उत्पत्ति परम्परा स्वयं चलती है।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास पृष्ठ १५३-१५४)

भगवान ने उपसिव माणव को समझाया कि जिस प्रकार दीपक की लौ वायु से बुझ जाने पर अदृश्य हो जाती है, उसका कोई चिन्ह शेष नहीं रहता, उसी प्रकार नाम रूप से विमुक्त मरने पर मुनि अदृश्य हो जाता है।

उपसिव ने पूछा कि क्या उस मुनि का अस्तित्व नहीं रहता? भगवान ने उत्तर दिया कि उसका कोई प्रमाण नहीं दिया जा सकता, उसका कुछ भी अवशिष्ट नहीं रहता है, जिसके विषय में मैं कुछ बता सकूँ। उसके सभी धर्मों का नाश हो जाता है, अतः शब्दों में उसका वर्णन नहीं किया जा सकता।

(उत्तर प्रदेश में बौद्धधर्म का विकास पृष्ठ १६६-१६७)

यदि कोई व्यक्ति अपने मन को पाँच स्कन्धों अर्थात् रूप, वेदना, संज्ञा और विज्ञान से मुक्त कर लेता है, तो उसे इसी जीवन में निर्वाण प्राप्त हो जाता है, केवल पूर्ण साधक का ही विज्ञान पुनर्जन्म ग्रहण करता रहता है, पूर्ण सन्त का विज्ञान नहीं।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास पृष्ठ १६८)

बौद्ध दर्शन शून्यवादी सिद्धान्त को मानता है। वह कहता

है कि जिस तरह दीपक जलते-जलते बुझकर अस्तित्व विहीन हो जाता है, उसी प्रकार प्रत्येक पदार्थ जड़ व चेतन्य परिवर्तित होता रहता है और अन्त में अस्तित्व विहीन बनकर शून्य हो जाता है।

किन्तु बौद्ध दर्शन की यह मान्यता भ्रान्तियुक्त है मोमबत्ती या तेल का दीपक जलते-जलते अपने तत्वों को परिवर्तित स्वरूप में विद्यमान रखता है। वस्तुतः पूर्ण विनाश वस्तु के स्वरूप का होकर उसके परमाणुओं का अन्य रूप में अस्तित्व बना रहता है।

प्रत्येक जड़ वस्तु के उपादान कारण परिवर्तित स्वरूप में सदा बने रहते हैं, क्योंकि भौतिक वस्तुओं का निर्माण पंचभूतों के परमाणुओं से होता है तथा पंचभौतिक प्रत्येक वस्तु परिवर्तनशीलधर्मी होती है।

जीवात्मा नित्य, चैतन्य और अनादि सत्ता होने के कारण कर्म क्षेत्र में पंचभौतिक शरीर का आश्रय ग्रहण करता है। कालान्तर में उसे त्याग कर निज कर्मानुसार पुनः अन्य साकार शरीर के साथ प्रकट होता रहता है और यह क्रम सदैव जारी रहता है जब तक कि वह शुभ कर्मों योगाभ्यासादि के द्वारा जीवन-मरण के चक्र से परान्त काल तक के लिए मुक्त न हो जाये। उसे अपने पूर्व जन्मों के संस्कारों का भी स्मरण रहता है। अनेक पुनर्जन्म की घटनाएं इसके प्रमाण हैं।

यदि सब कुछ अन्त में शून्य ही होना माना जायेगा तो

फिर कर्मफल व्यवस्था न रहेगी। सभी निःशंक होकर अनाचार में प्रवृत्त हो जायेंगे। निकम्मापन पैदा होगा, सृष्टि का कोई प्रयोजन ही नहीं रह जायेगा।

कर्त्तव्य-अकर्त्तव्य का भेद निरर्थक होगा। यह शून्यवाद मानव में अपने जीवन के प्रति विरक्ति एवं अनास्था उत्पन्न करेगा, जो कि सम्पूर्ण जीवन व समाज को बर्बाद करेगा।

जीवात्मा नित्य चैतन्य सत्ता है। उसकी उत्पत्ति पंचभूतों के मेल से नहीं होती है। यदि पंचभूतों से उसकी उत्पत्ति मानी जाये तो घड़ा चेतन्य क्यों नहीं हो जाता? क्योंकि वह भी पंचभूतों से बनता है।

मरने के बाद भी शरीर में पंचभूत ज्यों के त्यों विद्यमान रहते हैं, किन्तु चेतन्य जीवात्मा, जो शरीर में पृथक से प्रविष्ट हुआ होता है, वह निकल जाता है। अतः स्पष्ट है कि चेतन्य जीवात्मा की सत्ता शरीर से पृथक होती है, वह पंचभूतों से पैदा नहीं होता है।

बोलचाल में भी सभी कहते हैं कि यह मेरा शरीर है, मेरा हाथ है। यह बताता है कि शरीर को अपना बताने वाला जीवात्मा शरीर से पृथक उसे अपनी सम्पत्ति मानता है।

जीव के स्कन्धों की नित्यता की चर्चा मूर्ख लोग किया करते हैं, उनमें कोई तत्व नहीं है। जो समर्थ भिक्षुकगण स्कन्धों को रात-दिन इस प्रकार निस्तत्व और नाशवान समझते हैं, उनके सारे बन्धन कट जाते हैं और वे अमर पद

प्राप्त करते हैं। जो लोग उक्त स्कन्धों में से किसी एक को अपनी आत्मा मान बैठते हैं, वे मूर्ख हैं।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास पृष्ठ १३०)

पहले यह समझ लेना आवश्यक है कि स्कन्ध उत्पत्ति विनाशशील है।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास, पृष्ठ १७१)

बौद्ध मत में पुनर्जन्म क्यों और कैसे?
(चार आर्य सत्य)

दुःख-दुःख का कारण, दुःख का नाश, दुःख नाश के उपाय, ये चार आर्य सत्य हैं।

(1) दुःख-यह संसार दुःखमय है। इसके साथ सदैव जन्म-जरा-रोग और मृत्यु का चक्र लगा रहता है।

(2) दुःख का कारण-इच्छा या तृष्णा है, जो सांसारिक जीवन में बार-बार उत्पन्न होती व बढ़ती रहती है। तृष्णा का सबसे बुरा रूप यह है कि मनुष्य मृत्यु के समय यह कामना करता रहता है कि वह फिर से इस संसार में जन्म ले।

(3) दुःख का नाश-जो इच्छा व तृष्णा को पूर्णतः नष्ट करके ही किया जा सकता है।

(4) दुःख और पीड़ा के नाश का उपाय-अष्टांग धर्म वाला मध्यम मार्ग है।

तृष्णा द्वितीय सत्य है जो अनुभूति वेदना से उत्पन्न होती है। अनुभूति या वेदना स्वयं छहों इन्द्रियों का अपने-अपने इन्द्रियार्थों या विषयों से सम्बन्ध होने पर उत्पन्न होती है।

षड इन्द्रियों की उत्पत्ति मनुष्य के संसार में जन्म लेने के कारण होती है और जन्म के कारण कर्मों के संस्कार अर्थात् प्रभाव जिन्हें पूर्व जन्मों से प्राप्त करता है ....बार-बार जन्म लेने का कारण इच्छा विशेषतः पुनर्जन्म की इच्छा है, जिसमें जरा, रोग और मरण अवश्यम्भावी हैं।

पुनर्जन्म की इच्छा ही पंचतत्वों के संयोग का कारण है, जिसमें जीव की देह का निर्माण होता है।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास, पृष्ठ ५४)

समीक्षा- यह है बुद्ध जी का कपोल कल्पित जीवात्मा का स्वरूप, जिस पर बौद्ध मत वालों को गर्व है। इसमें केवल शब्दाडम्बर का प्रयोग किया गया है। जीवात्मा के स्वरूप के बारे में कोई भी बात ठोस तथ्य की नहीं है।

बुद्ध जी कहते हैं कि आत्मा नाम की कोई नित्य सत्ता नहीं है। यदि सत्ता शरीर से पृथक अस्तित्व नहीं रखती है, तो उनके द्वारा मान्यता प्राप्त पाँच स्कन्धों की अनुभूति किसे होती है?

रूप तो अग्नि तत्व का गुण होता है तथा आकृति शरीर की होती है। उससे कोई कैसे मुक्ति पा सकता है, जब तक वह शरीरधारी है। वेदना अर्थात् कष्ट की अनुभूति किसी

चेतन्य सत्ता को ही हो सकती है।

जब आत्मा ही आत्मा नहीं है तो फिर अनुभूति किसको होती है? भौतिक शरीर को तो अनुभूति कष्टों की नहीं होती है। संज्ञा का अर्थ ज्ञान अथवा होश है।

संस्कार-कृत कर्मों के चित्र पर पड़ी हुई स्मृतियाँ ही संस्कार हैं। किन्तु वेदना, संज्ञा, संस्कार तथा विज्ञान अर्थात् विशेष ज्ञान, यह सब किसी चेतन्य को ही हो सकता है, वही इसका अनुभव कर सकता है और यह सब पंच ज्ञानेन्द्रियों के माध्यम से जीवात्मा के अनुभव करने की बाते हैं।

जड़ शरीर पर अर्थात् बिना जीवात्मा के शरीर पर इनका कोई प्रभाव नहीं होता है। इससे तो यह स्पष्ट हुआ कि शरीरान्तर्गत निवास करने वाली आत्मा ही इनके प्रभाव का अनुभव करती है। इससे तो आत्मा की सत्ता भौतिक शरीर से पृथक साबित हो जाती है।

बुद्ध जी एक विलक्षण बात और भी कहते हैं कि देही के भीतर इन पंच स्कन्धों के अतिरिक्त आत्मा नाम का छठा तत्व नहीं है। यह पाँच बातें तो शरीर का संगठन नहीं कर सकती हैं। शरीर तो पंचभूत अग्नि, जल, वायु, पृथ्वी और आकाशीय तत्वों से बनता है, जबकि उनके द्वारा माने गये पाँच स्कन्ध इनमें से एक भी नहीं है, तब उनका कुतर्क बेकार हो जाता है।

पंचभूत स्वयं जड़ होते हैं। जड़ से चेतन्य सत्ता की

उत्पत्ति नहीं हो सकती है, जिसमें ज्ञान भी मौजूद हो। जब कोई व्यक्ति संज्ञानहीन हो जायेगा तो वह जड़ अर्थात् मृतक अथवा अवचेतन मूर्ख बन जायेगा।

उस दशा में वह मुक्त न होकर मृतकवत् व पत्थर के समान हो जायेगा। वह ज्ञानहीन हो जायेगा तब उसका निर्वाण अथवा मोक्ष क्या होगी और मुक्ति में वह क्या आनन्द उठायेगा?

पूर्ण साधक का विज्ञान ही पुनर्जन्म ग्रहण करता रहता है, इसका क्या अर्थ है? यहाँ विज्ञान का अर्थ आत्मा है, तब तो आत्मा का अस्तित्व बुद्धि को स्वीकार करना पड़ेगा।

यदि पाँचों स्कन्धों में से एक में भी चेतन्य जीवात्मा की सत्ता नहीं है तो फिर पुनर्जन्म लेने वाला विशेष ज्ञानी अर्थात् विज्ञानी कौन है, जो एक शरीर में से निकलकर दूसरी योनि में व शरीर में बार-बार जन्म लेता-फिरता है।

यदि पंचस्कन्ध मिलकर चेतन्यता पैदा कर लेते हैं, तो वह चेतन्यता पुनर्जन्म में कैसे आती है और पूर्व जन्मों की स्मृति उसे कैसे रहती है? यदि वह चेतन्य एकदेशीय सत्ता नहीं है?

ज्ञान व विज्ञान तो मस्तिष्क की स्मृति व विकास पर निर्भर करता है और मस्तिष्क शरीर के साथ नष्ट हो जाता है। चेतन्य जीवात्मा ही जब एक शरीर से दूसरे शरीर में जाता है, तो पूर्व जन्म का ज्ञान साथ ले जाता है, उसे

'**संस्कार**' कहा जाता है।

इस प्रकार जीवात्मा का अस्तित्व स्वतः सिद्ध है। जब बुद्ध स्वयं पुनर्जन्म को स्वीकार करते हैं, तब यह कहना कि दीपक की लौ के समान मरने पर जीवात्मा का अस्तित्व नहीं रहता है, कोरी बकवास मात्र है। दीपक की लौ और जीवात्मा की समता का दृष्टान्त ही नहीं बन सकता है।

लौ की उत्पत्ति तेल व बत्ती के जलने से होती है, वही लौ का आधार है, पर पंचतत्व जीवात्मा की उत्पत्ति का कारण नहीं है। दीपक की लौ एक स्थान से बुझकर दूसरी जगह नहीं जा सकती है, परन्तु जीवात्मा सैकड़ों जन्म यत्र-तत्र-सर्वत्र लेती फिरती है।

यह तर्क भी हास्यास्पद है कि कर्म करने वाला कर्म फल नहीं भोगता है। शरीर के परमाणु भले ही बदल जायें, चपरासी ऊँचा उठकर अर्थात् उन्नति करके तहसीलदार भले ही बन जाये, जवान शरीर बड़ा होकर बूढ़ा भले ही बन जाये, पर उसमें रहने वाला और कर्म करने वाला देही अर्थात् जीवात्मा तो उसमें मरणपर्यन्त रहेगा ही।

तलवार से यदि हत्या की जायेगी, तो दण्ड तलवार को नहीं मिलेगा, बल्कि उसे प्रयोग में लाने वाले को मिलेगा। शरीर के द्वारा कर्म करने वाले को शरीर के माध्यम से ही दण्ड व पुरस्कार मिलेगा।

क्या न्यायालय यह कुतर्क मान लेगा कि जिस शरीर ने

कर्म किया था, अब उसके रूप में या उसके परमाणुओं में अन्तर आने से वही कर्मकर्त्ता नहीं रहा है? अत: दण्ड उसे न दिया जाये।

बुद्ध जी के कुतर्क भी हास्यास्पद होते थे। परमात्मा व स्वतन्त्र आत्मा के अस्तित्व को न मानने के लिए उनको कितना शाब्दिक जाल रचना पड़ा था? यह प्रत्यक्ष है।

स्कन्धों को नाशवान मान लेने से ही बन्धन कट जाते हैं। यह कल्पना मूर्खों को बहकाने मात्र के लिए है। यदि आत्मा पंचतत्वों या स्कन्धों से बना हुआ होता तो मरने के बाद भौतिक शरीर के साथ ही वह नष्ट हो जाना चाहिए था। उसका पुनर्जन्म नहीं हो सकता था।

चाहे कोई व्यक्ति पुनर्जन्म की इच्छा न भी करे अथवा हर समय अपने को शुद्ध मुक्त ब्रह्म ही बुद्ध जी की तरह सोचता रहा करे, किन्तु जीवन में कर्म तो करेगा ही और वह जो भी कर्म करेगा उन कर्मों का परिणाम अच्छा या बुरा उसे भोगना ही पड़ेगा, इसीलिए उसे पुनर्जन्म मिलेगा।

यदि कोई भी कर्म नहीं करेगा, तो उसकी आत्मा में आलस्य समा जायेगा तथा पुनर्जन्म में वह विष्ठा कीट या केचुँए की तरह पड़ा सड़ता रहेगा। उसकी आत्मा में चेतन्यता आगे बढ़ने की भावना ही नहीं होगी।

कर्म और संस्कारों के अनुसार पुनर्जन्म की व्यवस्था कौन करता है, जिससे जीव को उनके अनुसार भोग ठीक-ठीक

मिल सके, इस रहस्य को न तो बुद्ध जी ने समझा और न उस पर कोई प्रकाश ही डाला गया है।

प्राय: देखा जाता है कि पुनर्जन्म प्राप्त बालक जो पूर्व जन्म में विशेष रोग से पीड़ित रहे थे उनके शरीर के वह अंग पुनर्जन्म के भी पीड़ित देखे जाते हैं। सर्प के काटने से मरने पर पुनर्जन्म प्राप्त शरीर में कण्डमाला की विद्यमानता कई बालकों में देखी गयी है, जिनको पूर्व जन्म की याद थी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि आत्मा का अस्तित्व शरीर से पृथक होता है, वही जन्म जन्मान्तरों में घूमता रहता है। पुनर्जन्म की इच्छा करने से नहीं वरन् कृत कर्मों का फल भोगने एवं उत्तम कर्म करके जीवन में आनन्द भोगने के लिए होता है।

जीवन क्लेशमय नहीं है, क्लेश के क्षण तो जीवन में बहुत थोड़े होते हैं। सुख व आनन्द का समय जीवन में बेहद होता है। कोई भी हिसाब लगाकर देख ले। यह संसार आनन्दमय है, क्लेशमय नहीं है।

संसार के व्यवस्थापक परमात्मा ने जीवन सुखमय बनाने के लिए सभी कुछ पैदा कर रखा है। बुद्धिमान उससे लाभ उठाते हैं और कायर, निकम्मे व मूर्ख हाय-मरा, हाय मरा कह-कहकर रोते रहते हैं।

शरीर को स्वस्थ बनाने, जीवात्मा को पवित्र संस्कारों वाला बनाने, आध्यात्मिक उन्नति करने, उच्च मनोबल वाला

बनाने, अपनी शक्तियों का उच्चतम् स्थिति तक का विकास करने आदि के लिए प्रभु ने संसार बनाने के साथ ही वेद द्वारा श्रेष्ठतम् मार्ग का उपदेश सृष्टि के आदि में मानव को दे दिया है। उससे लाभ उठाना या न उठाना, विपरीत आचरण करके मनुष्य जन्म को व्यर्थ बनाने की जिम्मेदारी मानव की स्वयं की है।

खेद है बुद्ध जी ने भारत के करोड़ों लोगों का जीवन नास्तिक व माँसाहारी बनाकर बर्बाद कर दिया। इसके लिए उनके अनुयायियों को क्षमा मांगकर प्रायश्चित करना चाहिए।

जीवात्मा की सत्ता के विषय में हमारा कहना है कि चेतन सत्ता का अस्तित्व शरीर से पृथक होता है। यदि ऐसा नहीं माना जायेगा तो यह मानना होगा कि चेतन्यता शरीर के उन तत्वों में होगी जिनसे वह बनता है। किन्तु प्रत्यक्ष है कि शरीर निर्माण के उपादान कारण किसी भी तत्व में चेतन्यता नहीं होती है।

यदि भिन्न-भिन्न तत्वों में भिन्न-भिन्न चेतन्यतायें कल्पित की जायेंगी तो उनके मिलने से हमारी जैसी चेतन्यता नहीं उत्पन्न हो सकेगी। यदि पृथ्वी आदि तत्वों के मिलने से चेतन्यता उत्पन्न होना माना जायेगा तो घड़े में भी वैसी ही चेतन्यता क्यों नहीं पैदा होती है? यह प्रश्न खड़ा होगा।

यदि पंचतत्वों से चेतन्यता पैदा होती तो मुर्दे में भी वह होनी चाहिए थी, क्योंकि पंचतत्व उसमें पूर्वावस्था में विद्यमान

रहते हैं। जैसे आग में दाहकत्व स्थिति रहता है, गुण, गुणी में विद्यमान रहता है। किन्तु मरने के बाद शरीर में से कोई चेतन्य तत्व निकल जाता है, जिससे पृथक अस्तित्व साबित हो जाता है।

यदि जीव की शरीर से पृथक सत्ता न होती तो जवानी की बात बुढ़ापे में कैसे याद रहती? क्योंकि शरीर तो प्रतिक्षण बदलता रहता है जीवन नित्य होने से शरीर के बदलने के साथ नहीं बदलता, और उसे अपने शरीर की हर अवस्था की याद बनी रहती है। यहाँ तक कि एक शरीर त्याग कर दूसरे शरीर में जाने पर पुनर्जन्म में भी अनेक लोगों को पूर्व जन्म की याद रहती है। स्वयं बुद्ध जी ने अपने बारे में कहा था कि–उनको अपने ३५० पूर्व जन्मों की याद थी।

इस प्रकार बौद्ध मत का जीवात्मा को उत्पत्तिशील मानना गलत है। वह अनादि चेतन्य सत्ता है और स्वकर्मानुसार जन्म-जन्मान्तरों के चक्र में सदैव घूमता रहता है, यह वैदिक दार्शनिक सिद्धान्त सत्य है।

बुद्ध का एक और कुतर्क है कि वृक्ष से बीज और बीज से वृक्ष स्वयं पैदा होते रहते हैं। अत: उत्पत्ति का यह क्रम कारण परम्परा के सिद्धान्तानुसार होता रहता है, इसमें ईश्वर का कोई काम नहीं है।

हमारा कहना है कि निर्माण ज्ञानपूर्वक जहाँ होगा, वहाँ निर्माणकर्त्ता ज्ञानवान का होना आवश्यक होगा, अन्यथा

अनियमित निर्माण होगा। गुलाब के फूलों में रंग स्वयं नहीं आयेगा। बालक का शरीर माता के गर्भ में स्वयं बिना बनाने वाली चेतन्य सत्ता के नहीं बनेगा तथा गर्भाशय में व्याप्त नहीं होगी।

बुद्ध जी ने ब्रह्म बनने का दावा किया था, उन पर बुढ़ापा कैसे आ गया और वे पेट के दर्द से कैसे मर गये। जब वे सिद्ध थे तो भूख-प्यास पर भी अधिकार क्यों न कर सके। केवल साठ साल की उम्र में उनका शरीर जीर्ण कैसे हो गया? ईश्वरीय सत्ता के नियमों में औरों की तरह क्यों बंधे रहे?

एक बोतल या बिजली के पंखे को देखकर उसके ज्ञानवान बनाने वाले की सत्ता को कोई स्वीकार न करे तो वह पागल क्यों नहीं माना जायेगा? क्या यह सब बिना बनाये बन जाता है।

कपड़ा अपने आप बुनकर, टोपी, कुर्ता, धोती, पैन्ट आदि स्वयं बिना बनाने वाले अर्थात् दर्जी के बन जाती हैं? पेड़ की जड़ें, तना उसके ऊपर छिलका, अन्दर पतला छिलका, भीतर सख्त लकड़ी और उसमें होकर जमीन में से शक्ति, जल व खुराक खींचने की शक्ति, पत्तों द्वारा हवा में से खुराक लेना, सूर्य व वायु में से जीवन शक्ति लेना, सुस्वाद फलों की वृक्षों पर उत्पत्ति क्या यह जड़ वृक्ष स्वयं सब कुछ कर लेते हैं?

विशाल बड़ के वृक्ष में सभी गुण उसके सूक्ष्म से बीज

में कैसे समा जाते हैं? क्या यह वृक्ष स्वयं बनाता रहता है? ईश्वर की सत्ता से ही यह सब कुछ होता है और ईश्वरीय नियम इसके लिए कार्य करते हैं। इसी प्रकार जीवात्मा के लिए शरीर रूपी मकान परमात्मा बनाता है, स्वयं जीव नहीं बनाता है।

जीवात्मा को तो उस शरीर में बन्द किया जाता है और वह निराकार आत्मा इस कदर बिना कील या रस्सी के उसमें फँसा रहता है कि निकलकर भाग भी नहीं सकता है, जिस प्रकार स्वयं बुद्ध जी भी निकलकर नहीं भाग सके थे।

इस प्रकार कारण परम्परा सिद्धान्तानुसार स्वयं उत्पत्ति होती रहती है। कोई आत्मा व परमात्मा नहीं है। बुद्ध जी का यह सारा कथन अज्ञानियों को बहकाने के लिए उन्मत्त प्रलाप मात्र है।

अनार के वृक्ष पर फल व फूल लगते हैं। बीज फल में बनता है तो क्या अनार के बीज स्वयं एक निश्चित दूरी पर जमीन में घुसकर बाग लगा लेते हैं? जमीन में पत्थर बनते हैं तो क्या उन पत्थरों ने स्वयं जमीन में से निकलकर दिल्ली का लाल किला बना दिया?

नारी के गर्भ में रज-डिम्ब बनते हैं व वीर्य पुरुष शरीर में बनता है तो क्या बिना स्त्री-पुरुष के मिले ही निमित्त कारण के बालक बन जाता है? बिना चेतन्य निमित्त कारण के केवल उपादान कारण से वीर्य नहीं बनता है।

बीज तो उपादान कारण होता है, बिना निमित्त के ज्ञानपूर्वक सहयोग के कार्य अकेले उपादान कारण से नहीं तैयार होता है। यदि बुद्ध जी को या किसी बौद्ध ने दिल्ली का लाल किला बनाने वाले को नहीं देखा तो क्या वह यह मान लेगा कि वह किला अपने उपादान कारण पत्थरों से बिना किसी के बनाये खुद बन गया था।

इसी तरह ईश्वरीय सृष्टि में यदि कर्त्ता ईश्वर अप्रत्यक्ष हो जो इन नेत्रों से दिखाई न दे तो क्या इसका अर्थ यह होगा कि सारी रचना या उत्पत्ति बिना ज्ञान-दान सर्व व्यापक ईश्वर की रचना के स्वयं बनकर चल रही है? क्या यही बौद्ध दर्शन है? जिस पर बुद्ध जी के चेलों को गर्व है। यह दर्शन नहीं वरन् बुद्ध जी का ईश्वर व आत्मा को न मानने के लिए प्रलाप का कोरा कुतर्क था।

बुद्ध जी जन्मना वर्ण व्यवस्था को नहीं मानते थे, केवल कर्म से वे वर्ण व्यवस्था को मानते थे, किन्तु केवल कर्म ही तो इसके आधार पर नहीं हो सकते हैं। कर्म के साथ यदि ब्राह्मणत्व, क्षत्रित्व, आदि गुण, जिनमें न होंगे, वे भी तो ब्राह्मण-क्षत्रिय नहीं बन सकेंगे।

वर्ण व्यवस्था केवल पेशे पर ही तो निर्भर करती है। उसका आधार भी तो गुण-कर्म और स्वभाव होता है। गुण व स्वभाव का सम्बन्ध जन्म से काफी घनिष्ठ होता है।

यदि कोई शूद्र (मूर्ख) पुलिस या फौज में भर्ती हो जाये

तो क्या वह क्षत्रिय बन जायेगा, जब तक कि उसके जन्मना शूद्रत्व के संस्कार मिटकर क्षत्रियत्व धर्म के संस्कार व स्वभाव भी तदनुरूप न बन जायें?

केवल किताब लेकर मन्त्र बोलना सीख लेने पर या कुछ विद्या पढ़ लेने पर किसी को भी ब्राह्मणत्व का अधिकार नहीं मिल जायेगा, जब तक कि उसमें ब्राह्मणोचित गुण, कर्म और स्वभाव विद्यमान न हों।

दृष्टान्त के लिए स्वयं बुद्ध जी को ही ले लें। क्षत्रिय कुलोत्पन्न होने से उनमें भी ब्राह्मणत्व नहीं आ पाया था। अन्यथा वे स्वयं ब्रह्म बनने का दावा नहीं करते, पशुओं का मांस साधु बनने के बाद नहीं खाते, क्योंकि **'साधू सर्वभूत हितेरता:'** रहता है, अहिंसा उनके मन, वचन और कर्म में समाहित रहती है।

योगाभ्यासी को सर्वप्रथम यम- नियमों के पालन का अभ्यास करना पड़ता है, जिसमें अहिंसा व सत्य का प्रमुख स्थान होता है। बुद्ध हिंसक थे, हिंसा की स्वीकृति उन्होंने दी थी, स्वयं मांसाहारी थे। उन्होंने जो नरक की आयु बताई है, अपने से पूर्व के बौद्धों की आयु कितनी है?

चमत्कार और जादूगरी को दिखाकर लोगों को भ्रमित करके अपना मजहब चलाया और चेलों की संख्या बढ़ाई। यज्ञ पात्र व सामग्री को नदी में फिकवाया यह सब कुछ सच्चे ब्राह्मण व योगी नहीं कर सकते हैं, कोई भी बिना

ईश्वर विश्वास के योगी बन ही नहीं सकता है।

बुद्ध तो ईश्वर विरोधी नास्तिक थे, स्वयं ही खुदाई का दावा करने वाले थे, जो स्वयं खुदाई का दावा करता है, वह योगी नहीं वरन् घमण्डी होता है। ऐसे लोग बुद्धिमानों के आदरणीय नहीं होते हैं, चाहे उनके चेले-चेलियाँ कितनी ही तादात में क्यों न हों।

बुद्ध जी द्वारा ब्रह्मा-शिव-इन्द्र और कामदेव के अपने पास आने की बातें कहना उन्हें मिथ्यावादी साबित करता है, क्योंकि इन पौराणिक देवताओं का कोई अस्तित्व कभी नहीं रहा है। वे सर्वथा काल्पनिक थे। ईश्वर के ही ये सब गौणिक नाम रहे हैं। ये देवता विशेष पृथक नहीं थे।

ऐतिहासिक दृष्टि से इन्द्र तिब्बत के राजा को कहते थे। शिवजी भूटान के राजा की उपाधि थी। ब्रह्मा हिमाचल के राजा की उपाधि थी तथा विष्णु मानसरोवर के आस-पास के क्षेत्र के राजा की उपाधि थी।

ये सब पर्वतीय नरेश होते थे और जो भी उनकी गद्दी पर बैठता था, वह उस गद्दी के नाम से ही पुकारा जाता था। इसका वर्णन पुराणों व महाभारत में आता है।

बुद्ध जी ने अपनी प्रतिष्ठा बढ़ाने के लिए इन देवताओं का आना-जाना कहा है, जो कोरी गप्पाष्टक है व बुद्ध जी को सत्यवादी साबित नहीं करती है, जिसे बुद्ध जी के नासमझ चेले-चपाटे जो मानते रहे। बुद्धिमान लोग ऐसे

सम्प्रदाय को दूर से ही प्रणाम करना ठीक समझते हैं।

बौद्ध मत में जाने के बाद मनुष्य की बुद्धि कितनी विकृत हो जाती है? यह देखना हो तो बौद्धों के प्रकाशन केन्द्र बहुजन कल्याण प्रकाशन लखनऊ व झीझक, कानपुर से प्रकाशित बौद्धों की गन्दी किताबें देखी जा सकती हैं, जिनके लेखकों की पुस्तक लिखने की अशिष्टता भारतीय सभ्यता व संस्कृति की निन्दा, आर्य ऋृषियों पर किये गये कमीने आक्षेप और मुसलमानों की प्रशंसा आदि की गयी है।

मध्यकाल में वाममार्गी वज्र सम्प्रदाय के बौद्धों द्वारा सम्पूर्ण संस्कृत साहित्य में मांसाहार, यज्ञों में पशु बलि, व्यभिचार-ऋृषियों के पावन चरित्रों को कलंकित करने वाली गलत बात जोड़-जोड़कर उनको भ्रष्ट करने अपनी कमीनी मनोवृत्ति की मान्यताओं के अनुरूप बनाने के कुकर्म किये गये थे और बौद्धों द्वारा उन्हीं प्रक्षिप्त बेहूदी बातों को प्रमाण मानकर............ उन पर कीचड़ उछाला गया है।

कई नवीन बौद्ध इस देश की मान-मर्यादाओं को मिटाने के लिए गन्दी किताबें लिखकर नवीन बौद्धों की घृणित, द्वेषपूर्ण मनोवृत्ति का परिचय दे रहे हैं।

हम इन नव बौद्धों से पूछते हैं कि जब तुम भारतीय आर्यों की सन्तान ही अपने को नहीं मानते, वैदिक हिन्दू ध र्म से कोई सम्बन्ध नहीं मानते, भारतीय ऋृषियों से तुम्हारा कोई दूर का भी सम्बन्ध नहीं है तो तुमको हिन्दू महापुरुषों

व हमारे संस्कृत धार्मिक साहित्य पर कीचड़ उछालने का क्या अधिकार है? तुमने अपने नाम हिन्दू तरीके के क्यों रख छोड़े हैं?

यदि तुम श्रेष्ठ महापुरुषों की सन्तान होते व अच्छी संगति में पले होते तो तुम्हारे द्वारा आर्य महापुरुषों, आर्य ऋृषियों, वेद और वैदिक साहित्य रामायण आदि के विरुद्ध निराधार कमीनी भाषा वाली बेहूदी किताबें नहीं लिखी जा सकती थीं।

कोई भी शिक्षित, सभ्य और कुलीन व्यक्ति लेखन शैली में संयम व शालीनता दिखाता है। आलोचना सभ्य भाषा में अपनी निष्पक्ष व विपक्ष की मर्यादा का ध्यान रखते हुए सुध ार की भावना से करता है।

वह यह देखता है कि जो कुछ वह लिख रहा है क्या वह सत्य भी हो सकता है या जिन पर वह लांछन लगा रहा है क्या वह सत्य व सम्भव भी हो सकते हैं?

किसी भी लेखक की कृति ही उस लेखक के चरित्र व महानता अथवा जंगलीपन का दर्पण होती है। बौद्धों की हिन्दू धर्म के पूज्य महापुरुषों के विरुद्ध लिखी गयीं किताबें इतनी गन्दी हैं कि उनकी गन्दी बातों के उद्धरण देते हुए भी हमको लज्जा अनुभव होती है।

भारतीय आर्यों के चरित्रों, खान-पान, रहन-सहन आदि पर दुनिया का कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति कोई भी लांछन

लगा ही नहीं सकता है। तुम किस खेत की मूली हो।

भारतीय महापुरुष एवं भारतीय सीता जैसी नारियाँ अपने आदर्शों व चरित्रों की दृष्टि से विश्व में सर्वोच्च अनुकरणीय आदर्श रखती हैं तथा गर्व के साथ लोग अपने बच्चों व कन्याओं को उन जैसा बनने की प्रेरणा देते हैं, जबकि भ्रष्ट बौद्ध मत में एक भी पुरुष या स्त्री को आदर्श की दृष्टि से अनुकरणीय नहीं बताया जा सकता है।

हमने बौद्ध साहित्य का अध्ययन किया है, हम जानते हैं कि चरित्र भ्रष्टता, व्यभिचार, शराब व मांसाहार के प्रचार द्वारा जितना भयंकर विनाश मध्यकाल में भारतवर्ष का बौद्धों ने किया है, उतना किसी ने नहीं किया, भारतीय आदर्श वैदिक एवं संस्कृत साहित्य में गन्दे प्रक्षेप व मिथ्या कथाएं घुसेड़ कर उनको भ्रष्ट करने का प्रयत्न उन्होंने किया है, जो भारत में ब्राह्मणों- वैदिक धर्म एवं ईश्वर की सत्ता के विरुद्ध प्रचार तथा द्विजों के प्रति घृणा फैलाना ही इनका मुख्य कार्य रहा है।

ब्राह्मण, क्षत्रिय एवं वैश्य वर्ग के सभी समझदार लोग इस मत के विरुद्ध सदैव संघर्ष करते रहे हैं। क्योंकि वे जानते थे कि यह नास्तिक मत भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं धर्म के आदर्शों के विनाश का कारण बनेगा।

बौद्धों ने जनता को अपनी ओर खींचने के लिए वैदिक धर्म के उत्तम उपदेशों को संस्कृत साहित्य से लेकर अपना

साहित्य रचा, ताकि लोग उनके मत की ओर आकर्षित हों और जब लोग उसमें फंसने लगे तो उनको मद्य-मांस और व्यभिचार को उचित बताकर दुर्व्यसनी बनाया गया।

यहाँ तक हुआ कि जब तक वे वज्रयान के भैरवीचक्र* में पास नहीं होते थे, तब तक उनको बौद्ध नहीं माना जाता था। इस प्रकार भारतवर्ष के पवित्र धार्मिक वायुमण्डल को बौद्धों ने नष्ट-भ्रष्ट करके रख दिया।

इतिहास साक्षी है कि इसका परिणाम बौद्धों के लिए घातक सिद्ध हुआ तथा ब्राह्मण धर्म की एक ही ठोकर में ईश्वर विरोधी अनाचार से परिपूर्ण बौद्धमत भारत से मिट गया।

कुमारिल भट्ट तथा आद्य शंकराचार्य ने इस आदर्श विहीन नास्तिक मत को शास्त्रार्थों में परास्त करके इस देश से निकाल बाहर कर दिया। भारत का कोई भी कुलीन शिक्षित व्यक्ति आज भी इस पाखण्डपूर्ण मत की ओर देखना भी पसन्द नहीं करता है। केवल वही लोग इसमें फँसते हैं, जिन्होंने इसे पूरी तरह से समझा नहीं है।

हिन्दू समाज में व्याप्त छुआ-छूत से परेशान होकर कुछ छोटी जाति के लोग इसे समतावादी समझकर उसमें फँस

*भैरवी चक्र की विस्तृत जानकारी हमारे द्वारा प्रकाशित पुस्तक **'शिवलिंग पूजा क्यों?'** में पढ़ें, जो एतद् विषय पर पर्याप्त प्रकाश डालती है।

-लाजपत राय अग्रवाल (वैदिक मिशनरी)

जाते हैं तथा वहाँ उनको हिन्दू धर्म के विरोध में भड़काया जाता है।

नव बौद्धों द्वारा लिखित चन्द पुस्तकें हमारे देखने में आई हैं, जो हिन्दुओं के प्रति घृणा व प्रतिशोध की ही भावना से लिखी गयी हैं, जिनका परिणाम बौद्ध मत के ही विनाश का कारण बनेगा।

बौद्ध साहित्य को देखने से पता चलता है कि श्री बुद्ध जी ने जब सन्यास लिया था, तब उनके अपने मत प्रवर्तन के लिए कोई निश्चित सिद्धान्त नहीं थे। २९ वर्ष की आयु में सन्यास लेने के बाद जब वे देशाटन के लिए निकल पड़े थे तो किसी नवीन मत को चलाने का उनका कोई विचार नहीं था।

प्राचीन आर्य सिद्धान्तों का समर्थन ही उनका लक्ष्य था, किन्तु संस्कृत तथा वैदिक धर्म का विषद ज्ञान न होने के कारण वे ईश्वर, जीवात्मा, कर्मफल व्यवस्था, पुनर्जन्म, मोक्ष, सृष्टि उत्पत्ति, प्रलय आदि विभिन्न आध्यात्मिक तथा भौतिक प्रश्नों के समाधान में अपने को असमर्थ पाते हैं। और इसलिए दार्शनिक विषयों से हटकर उन्होंने लोगों को केवल कर्म करने का ही उपदेश दिया था। सदाचार पूर्ण जीवन, निरन्तर कर्म करते रहना, सर्वहित के काम करना उनके उपदेशों का आधार था।

वर्ण व्यवस्था के वे पोषक न थे। वे जब भी वर्णों का

नाम लेते थे, पहले क्षत्रिय और बाद में ब्राह्मणों और वैश्यों का वर्णन करते थे। जन्मना वर्ण व्यवस्था के वे विरुद्ध थे।

ब्राह्मणों एवं उनकी मान्यताओं के वे विरोधी थे। यज्ञों में कहीं-कहीं कोई मूर्ख लोग पशु बलि तक करने लगे थे। समस्त वैदिक सिद्धान्तों ने इसका प्रबल विरोध किया था और बुद्ध जी भी उसके विरोधी थे।

उन्होंने भी इस प्रकार की पशु बलि का विरोध किया था। अग्निहोत्री यज्ञ में चावल, घृत व काष्टादिक सामग्री व फलों के प्रयोग को उचित मानते थे। माँसाहार के वे समर्थक थे और स्वयं भी वे माँस खाते थे।

बुद्ध दृढ़ चरित्र के व्यक्ति थे। वो जहाँ भी जाते थे, लोगों पर उनका गहरा प्रभाव पड़ता था, क्योंकि वे राजपुत्र थे, क्षत्रिय थे। अत: राजाओं में भी उनका स्वागत खूब हुआ और उनको सहयोग भी उनसे बहुत मिलता था। बाद में उनका लक्ष्य अपने मत की स्थापना बन गया था।

महात्मा बुद्ध क्षत्रियों को ब्राह्मणों से ऊपर उठाने में प्रयत्नशील थे। वे क्षत्रियोत्कर्ष के लिए प्रयत्नशील रहे। किन्तु अपने प्रचार के लिए ब्राह्मणों का सहयोग प्राप्त करना पड़ा।

वे ईश्वर विश्वासी नहीं थे। उनके मत के सम्पूर्ण साहित्य में ईश्वर का कोई स्थान नहीं है। एक दृष्टि से वे नास्तिक सम्प्रदाय के प्रवर्तक थे। उन्होंने सर्वत्र ब्राह्मणों से अपने को श्रेष्ठ साबित कराने की बात कही है।

सम्पूर्ण बौद्ध साहित्य में यही लिखा हुआ मिलता है कि ब्राह्मण शास्त्रार्थ में पराजित हुए बिना ही बुद्ध की शरण में आ गये।

हिन्दू धर्म के देवता ब्रह्मा, शिव, इन्द्र अनेक बार बुद्ध जी के पास आये, उनकी परिक्रमा की, उनको अभिवादन किया, उनकी प्रशंसा की, उनके पास आकर एक ओर बैठ गये आदि। इस विषय में चन्द प्रमाण द्रष्टव्य हैं, जो बुद्ध मत को छल-कपट से फैलाने के बौद्धों के हथकण्डों का परदाफाश करते हैं।

महात्मा बुद्ध के तप की गल्प (झूठी) कथा

महात्मा बुद्ध ने तप किया था, यह सत्य है और यह भी सत्य है कि उसी तपोमय जीवन से उनको ज्ञान की प्राप्ति हुई थी तथा नवीन अनुभव हुए थे जैसे कि किसी भी काम के दीर्घकाल तक करने से सभी को होते हैं, और उसी प्रकार अभ्यासी को अपने लक्ष्य की प्राप्ति होती है।

यदि लक्ष्य पूरा न हो सके तो भी विशेष अनुभव तो हो ही जाता है, किन्तु बुद्ध जी की तपस्या का जो वर्णन बौद्ध साहित्य में उनके मुँह से कहलवाया गया है, वह एकदम अविश्वसनीय है। देखिए, हम वह यहाँ उपस्थित करते हैं।

'मज्झिम निकाय' के **'सिंहनाद सुत्तन्त'** में भगवान बुद्ध ने मुण्डेश्वरी पर्वत की अपनी कठिन तपस्या के सम्बन्ध

में अपने सर्वश्रेष्ठ शिष्य 'सारिपुत्र' से कहा था कि-

मैं उस कठिन तपश्चर्या में इस तरह रत हुआ कि मैंने अपने शरीर के ऊपर से सारे वस्त्र उतार फेंके। मैं बिल्कुल नंगा रहने लगा। लौकिक आचार-विचार सभी त्याग दिये।

किसी भी व्यक्ति का निमंत्रण स्वीकार नहीं करता, एक घर से सात घर तक घूम-घूमकर केवल एक-एक ग्रास मांगकर लाता और उसी प्रकार जीवन निर्वाह करता। आगे चलकर इसे भी छोड़ दिया और शाक, साँवा और धान खाने लगा।

बाद में इसे भी त्यागा और जला हुआ अन्न, रास्ते में पड़ा चमड़ा, गाय का गोबर, बकरियों की मेंगनी अर्थात् लेंड़ी आदि मेरे आहार हो गये।

पटुआ, चर्म टाट और मनुष्यों के बालों का बना कम्बल मैंने वस्त्र के रूप में स्वीकार किया। मैं दाढ़ी और मूँछ के बालों को हाथ से नोंच देता था।

उकड़ू बैठकर तपस्या करता तथा काँटों पर सो जाता था, यह सब मेरी तपस्या की ही पद्धति थी, हे सारिपुत्र, मेरी अवस्था ऐसी हो गयी कि मैं उठ-बैठ नहीं सकता था। उठने का प्रयास करने पर बार-बार गिर पड़ता था। मेरे मल-मूत्र बिल्कुल रूक गये। फिर भी इन कठिन तपस्याओं से कुछ भी लाभ नहीं हुआ।

(बौद्ध धर्म और बिहार, पृष्ठ-४८)

इसमें गाय का गोबर, बकरी की टट्टी, चमड़ा, जला हुआ अन्न खाने की बात लिखी गयी है, जो स्पष्ट कोरी गप्प है। गाय का गोबर इतना गर्म होता है कि १० ग्राम खाने पर स्त्री का गर्भ गिर जाता है। चमड़ा खाया ही नहीं जा सकता है और न वह मानव के दाँतों से कट सकता है।

काँटों पर सोने की भी बात बिल्कुल बेतुकी है। बुद्ध की तपस्या को घोर तपस्या जताने के लिए यह गल्प बुद्ध के चेलों ने गढ़कर उन्हीं के मुँह से कहलवायी है। स्वयं न तो बुद्ध जी का ऐसा भ्रष्ट आचरण रहा होगा और न उन्होंने यह बेतुकी बातें कही ही होंगी।

योगाभ्यास, समाधि व तप में मनुष्य की बुद्धि शुद्ध रहती है, तभी वह तप कर सकता है। टट्टी खाने वाले की तो बुद्धि अत्यन्त मलिन व भ्रष्ट हो जाती है। बौद्ध साहित्य में ऐसी बेतुकी गन्दी बातों को मिलाकर बौद्ध वाममार्गीय भ्रष्ट लोगों ने बौद्ध मत को बदनाम कर दिया है और वह माननीय नहीं रहा है।

बुद्ध जी सिद्ध योगी नहीं थे

बौद्ध साहित्य में बुद्ध जी को योगी साबित किया गया है। वहाँ उनके आकाश में उड़ने, चलने व पृथ्वी में प्रवेश करने की बातें लिखी हुई मिलती हैं। यह गुण बहुत ही उच्चकोटि के भारतीय योगियों में तब उत्पन्न होते हैं जब वे

ईश्वर की अत्यन्त दीर्घकाल तक एकाग्रचित्त से तन्मय होकर समाधिस्त होकर उपासना करते हैं।

यह उच्चकोटि की सिद्धियाँ हैं। बौद्धों ने भारतीय ब्राह्मण योगियों की नकल करने के लिए बुद्ध जी में यह सिद्धियाँ आरोपित कर दी थीं। सिद्धियाँ प्राप्त करने के लिए अत्यन्त सात्विक भोजन, सात्विक वृत्तियाँ योगी के लिए आवश्यक होती हैं। पर माँसाहारी बुद्ध जी में इन बातों का अभाव था। अत: वे सिद्ध योगी नहीं थे। देखिये उन्होंने एक जगह कहा है कि-

मैं अस्सी वर्ष का हो गया हूँ और अपने शरीर को जर्जर रथ की भाँति किसी प्रकार चलाए जा रहा हूँ। मेरे सच्चे शिष्यों को मुझे अपना गुरु और नेता नहीं समझना चाहिए।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास, ९१-९२)

यदि बुद्ध जी योगी होते तो केवल अस्सी साल में ही उनका शरीर जीर्ण तथा जर्जर नहीं बन सकता था। योगी व ब्रह्मचारी का शरीर स्वस्थ एवं आयु दीर्घ होती है। जीर्ण शरीर वाले व्यक्ति योगी बन ही नहीं सकते हैं।

स्वस्थ शरीर सात्विक आहार, दृढ़ मनोबल, योगी को मानसिक व शारीरिक दृष्टि से ७० या ८० साल की आयु में जीर्ण-शीर्ण नहीं होने देता है, जैसा कि बुद्ध जी की दशा माँसाहारी होने के कारण बन गयी थी। बुद्ध जी को सिद्ध

योगी बनाने की बात बौद्ध साहित्य की गल्प है।

आर्य सन्यासी **'स्वामी भीष्म जी'** हरियाणा में विद्यमान* हैं, जिनकी आयु १२६ साल की है और वे पूर्ण स्वस्थ हैं। उनका हरियाणा सरकार ने भी अभिनन्दन किया है। वे कोई सिद्धि प्राप्त भी नहीं हैं।

राजस्थान जिले के खैरखेड़ा ग्राम का निवासी **'लोहवंशी रामलाल'** १३० साल की आयु प्राप्त करके आज भी जीवित है और पूर्ण स्वस्थ है। इनका भरा-पूरा परिवार है। रामलाल का जीवन विवरण चित्र सहित दिल्ली के **'हिन्दुस्तान दैनिक'** के अन्दर दिनांक ७-१२-१९७७ ई० में छप चुका है।

ये दोनों व्यक्ति न तो सिद्ध अर्थात अर्हन्त हैं और न ही कोई दैवीय शक्ति सम्पन्न हैं। जबकि बुद्ध जी ने अपने को ब्रह्म बताया था और उसके सदेह आकाश में उड़ने के चमत्कार की गप्पें बौद्ध साहित्य में लिखी गयी हैं।

तब उनका शरीर ६० साल में ही जीर्ण-शीर्ण होकर कैसे समाप्त हो गया? स्पष्ट है कि बुद्ध जी साधारण मनुष्य से भिन्न नहीं थे।

आगे दिये गये सभी प्रमाण, जो बौद्ध मत की वास्तविक स्थिति का सही स्वरूप पाठकों के समक्ष रखेंगे, बौद्ध साहित्य पर लिखे गये विद्वानों के प्रमाणिक ग्रन्थों से लिये

---

*अब स्वामी भीष्म जी महाराज नहीं हैं। -लाजपतराय अग्रवाल

गये हैं। इनको पाठक देखकर बौद्धमत के वास्तविक स्वरूप को समझ सकेंगे।

बुद्ध जी की गप्पाष्टकों के कुछ नमूने

बुद्ध ने कहा–

मेरा चित्त धर्म प्रचार की ओर न झुककर अल्प उत्सुकता की ओर झुक गया। तब सहापति ब्रह्मा ने मेरे चित्त की बात जानकर ख्याल किया। लोक नाश हो जायेगा रे। लोकनाश हो जायेगा रे!

तब तथागत अर्हत सम्यक सम्बुद्ध का चित्त धर्म प्रचार की ओर न झुककर अल्प उत्सुकता की ओर झुक जाये, ऐसा ख्याल करके सहापति ब्रह्मा .... ब्रह्मलोक से अन्तर्ध्यान हो, मेरे सामने प्रकट हुआ, जिधर मैं था, उधर हाथ जोड़कर कहा, भन्ते! भगवान धर्मोपदेश करें, सुगत धर्मोपदेश करें।

तब ब्रह्मा सहापति भगवान ने धर्मोपदेश के लिए मेरी बात मान ली। यह जानकर मुझको अभिवादन कर वहीं अन्तर्ध्यान हो गया।

(मज्झिमनिकाय, पृष्ठ १०६-१०७)

देवराज इन्द्र और बुद्ध के शिष्य की गल्प

उस समय देवों का इन्द्र शक्र एक पुण्ड़रीक उद्यान में पाँच प्रकार के दिव्य वादनों से समर्पित-समंगीभूत हो घिरा

बैठा था शक्र ने दूर ही से आयुष्मान मौद्गल्यायन को आते देखा। देखकर उन पाँच प्रकार के दिव्य वाद्यों को हटाकर जहाँ आयुष्मान मौद्गल्यायन थे, वहाँ जाकर उससे बोला।

(मज्झिमनिकाय, पृष्ठ १४९)

इन्द्र द्वारा गौतम प्रशंसा की गल्प

तब शक्र देवेन्द्र ने तावत्रिंस अर्थात तैंतीस देवों से भगवान के गुणों को कहा।

इन्द्र और व्रला बुद्ध के पास आये।

(महागोविन्द सूत्त नं०-१९, पृष्ठ १६७)

उनके जाने के बाद उसी प्रकार से देवताओं का राजा इन्द्र शक्र आया। उसके जाने पर महा ब्रह्मा आये। स्थबिर ने उनको भी भेज दिया।

उपासिका – तात् उनके जाने के बाद कौन आया?

बुद्ध – देवों का राजा इन्द्र शक्र।

उपासिका – उसके जाने के बाद कौन आया?

बुद्ध– उपासिके! यह तुम्हारे ब्राह्मणों के भगवान शस्ताब्रह्मा थे।

उपासिका – तात्! तुम मेरे भगवान महा ब्रह्मा से भी बढ़कर हो?

बुद्ध ने कहा– हाँ! उपासिके।

(बुद्धचर्या पृष्ठ ४७९)

इन्द्र बुद्ध से मिलने आया की गल्प

एक दिन भगवान बुद्ध राजगृह के वैदिक पर्वत की इन्द्र शाल गुफा में विहार कर रहे थे। तब स्वयं शक्र अर्थात् इन्द्र उनसे मिलने वहाँ आया।

(बौद्ध धर्म और बिहार, पृष्ठ ११२)

इन्द्र का बुद्ध को अभिवादन करने की गल्प

एक समय भगवान श्रावस्ती में मृगार माता के प्रासाद पूर्वाराम में विहार कर रहे थे। तब देवताओं का इन्द्र शक्र वहाँ गया, जाकर भगवान को अभिवादन कर एक ओर खड़ा हो गया। एक ओर खड़े देवेन्द्र शक्र ने भगवान से कहा-

कैसे भन्ते! भिक्षु संक्षेप में तृष्णा के क्षय द्वारा मुक्त...। तब देवों का इन्द्र शक्र भगवान के भाषण का अभिनन्दन कर, अनुमोदन कर भगवान को अभिवादन कर प्रदक्षिणा करते-करते वहीं अन्तर्ध्यान हो गया।

(सूक्त पिटक-मज्झिम निकाय, पृष्ठ १४८)

जिन पौराणिक देवता ब्रह्मा, शिव व इन्द्रादि की ब्राह्मण व देश की जनता भगवान मानकर पूजा किया करती थी।

बौद्धों ने उनके द्वारा बुद्ध जी की प्रशंसा व स्तुति करवा कर उनको भ्रातृत्व हीन साबित करने तथा स्वयं बुद्ध जी के मुँह से अपने को उनसे भी बड़ा घोषित करवा कर बुद्ध व

उनके मत को शिरमौर बनाने का दावा किया है।

जिन देवताओं का अस्तित्व ही नहीं है, उनका बुद्ध के पास आना, उनको अभिवादन करना आदि यह प्रकट करता है कि बौद्ध धर्म की आधारशिला सिर्फ कल्पनाओं पर आधारित है न कि वास्तविकताओं पर। उसी प्रकार एक स्थान पर बौद्ध साहित्य में लिखा गया है कि स्वयं बुद्ध जी ने अपनी प्रशंसा में कहा है-

बुद्ध की गर्वोक्ति

मैं सबको पराजित करने वाला हूँ, सबका जानने वाला हूँ। सभी धर्मों में निर्लेप हूँ। सर्व त्यागी हूँ। तृष्णा के क्षय से विमुक्त हूँ।

मैं अपने ही जानकर उपदेश करूँगा। मेरा आचार्य नहीं है।

मेरे सदृश कोई विद्वान नहीं है। देवताओं सहित सारे लोक में मेरे समान कोई पुरुष नहीं। मैं संसार में अर्हन्त हूँ अपूर्व शास्त्रा अर्थात् गुरु हूँ। मैं एक सम्यक संबुद्ध शीतल तथा निर्वाण प्राप्त हूँ।

धर्म का चक्र घुमाने के लिए काशियां के नगर को जा रहा हूँ। वहाँ अन्धे हुए लोक में अमृत दुन्दुभी बजाऊँगा।

नोटः उपक आजीव के प्रश्न करने पर कि-

तुम्हारा गुरु कौन है?

बुद्ध ने उपरोक्त जवाब दिया था।

(मज्झिम निकाय, पृष्ठ १०७)

यह गर्वोक्ति ऐसी विलक्षण है कि इस पर विश्वास नहीं किया जा सकता कि ये सब बातें बुद्ध ने कहीं होंगी।

यदि उन्होंने ही यह सब कहा था तो बुद्ध की यह गर्वोक्ति मिथ्या मानी जायेगी। ऐसी विलक्षण गर्वोक्ति कभी संसार के किसी भी विद्वान के धर्मोपदेष्टा ने नहीं की और न कोई भी कहेगा।

यह घमण्ड की गर्वोक्ति है, जो मिथ्या है तथा यदि इस बात को बाद में बुद्ध के शिष्यों ने गढ़ कर लिख दी हो तो बौद्ध साहित्य की प्रमाणिकता नष्ट हो जायेगी। काशी के विद्वानों को अन्धा तथा स्वयं को सर्वोपरि, सर्वज्ञ बताना भले आदमी का काम नहीं था।

असम्भव आयु की गल्पें

गौतम ने कहा–

- **विपस्सी भगवान का आयु प्रमाण अस्सी हजार वर्ष का था।**
- **सिखी भगवान सत्तर हजार वर्ष।**
- **वेस्सु भगवान साठ हजार वर्ष।**
- **ककुसन्ध भगवान चालीस हजार वर्ष।**
- **कोणागमन भगवान तीस हजार वर्ष।**
- **कस्सग भगवान बीस हजार वर्ष।**
- **भिक्षुओं और मेरा आयु प्रमाण बहुत कम और छोटा है।**

(महापदान सूत्र, पृष्ठ ९६)

यह आयु की गप्पाष्टकें ठीक ऐसी ही हैं, जैसे जैनियों ने अपने तीर्थङ्करों की आयु की अरबों-खरबों व असंख्यात वर्षों की गल्पें अपने शास्त्रों में लिखीं हैं। दृष्टान्त के रूप में दो जैन तीर्थङ्करों की आयु का नमूना इस प्रकार है, देखिए-

ऋषभदेव की आयु **५९२७०४,** इसके आगे **१५** शून्य और रख दें, उतने वर्ष की थी। अजितनाथ की आयु **५०८०३२** इसके आगे **१५** शून्य और रख दें उतने वर्ष की थी।

इसी तरह शेष तीर्थङ्करों की आयु की गल्पें जैन शास्त्रों में लिखीं हैं। गप्पें ठोकने में दोनों बौद्ध और जैनी एक दूसरे से बढ़-चढ़कर रहे हैं।

महाभूत और बुद्ध जी

संसार पंच महाभूतों से बना हुआ है-अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी, और आकाश। किन्तु बुद्ध जी को केवल चार ही सूझ पड़े-अग्नि, वायु, जल और पृथ्वी। आकाशीय तत्व को वे समझ ही नहीं सके, जिसके बिना कुछ भी सम्भव नहीं होता है।

(देखो मज्झिम निकाय, पृष्ठ ११६-२७)

ऊटपटांग बौद्ध गणित का नमूना

एक भिक्षु ने भगवान बुद्ध से पूछा-**भन्ते! पद्म नरक**

की आयु कितनी लम्बी है? क्या इसकी कोई उपमा दे सकते हो?

भगवान बुद्ध ने कहा-

हाँ भिक्षु! उपमा दी जा सकती है। भिक्षु मान लो कि बीसरवारि, जो उस समय की माप थी, तिल ओटने वाली कौशल की जो गाड़ी है। एक पुरुष एक हजार वर्ष के बीतने पर उसमें से दस तिल निकाले।

इस क्रम से कालान्तर में बीस खारी तिल भरी वह गाड़ी खाली हो जायेगी। लेकिन अम्बुद नरक के जीवनकाल की आयु नहीं, भिक्षु! अम्बुद नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है, निरम्बुद नरक का एक जीवनकाल।

- भिक्षु! अबव नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है अहह नरक का एक जीवनकाल।
- भिक्षु! अहह नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है अहह नरक का एक जीवनकाल।
- भिक्षु! अहह नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है, कुमुद नरक का एक जीवनकाल।
- भिक्षु! कुमुद नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है सोगन्धिक नरक का एक जीवनकाल।
- भिक्षु! सौगन्धिक नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है। उपलनरक का एक जीवन काल।
- भिक्षु! उपल नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है पुण्डरीक नरक का एक जीवनकाल।

- **भिक्षु! पुण्डरीक नरक के बीस जीवनों की आयु के बराबर है पद्म नरक का एक जीवनकाल।**

(बुद्ध सुत्त निपात, पृष्ठ १४५)

क्या यह वर्णन किसी बुद्धिमान व्यक्ति का हो सकता है? क्या बुद्ध जी का ज्ञान-विज्ञान इतना ही श्रेष्ठ था कि वे ऐसी गल्पें लिखवा-लिखवा कर वे चेलों को पढ़ाकर मूर्ख बनाया करते थे।

दद्मूने की एक और गल्प

बुद्ध जी ने कहा-

भिक्षुओं! सौ हजार कल्पों से अधिक समय तक परमित अर्थात् दान आदि पूर्ण किया हुआ यह भिक्षु अर्थात् सारिपुत्र था। ...... प्राप्त महान् सम्पत्तियों को पाँच सौ जन्मों तक छोड़कर यह भिक्षु प्रवृजित होता रहा। ... जो पाँच सौ जन्मों तक मनोरथ भोगों को छोड़कर प्रवृजित होता रहा। उस वीतराग जितेन्द्रिय निर्वाण प्राप्त सारिपुत्र की वन्दना करो।

(बौद्धमत और बिहार, पृष्ठ ६९)

गौतम बुद्ध ने एक स्थान पर कहा था कि वह ९१ कल्पों तक के पीछे की बात देख सकते थे, पर यहाँ वे सारिपुत्र के सौ हजार कल्पों तक जानने की बात कहते हैं। दोनों में से कौन-सी बात उनकी सच मानी जाये और कौन-सी झूठ? कोई समझदार, बौद्ध व्यक्ति इसको स्पष्ट

करे।

बुद्ध के नाग दमन की गल्प

अपने देशाटन के मध्य महात्मा बुद्ध एक स्थान पर रात्रि को ठहरने के लिए गये। वह स्थान पण्डित उरूवेला काश्यप का था? वहां का वृतान्त इस प्रकार है–

उरूवेला काश्यप याज्ञिक था। उसकी यज्ञशाला की रक्षा एक नागराज करता था। नागराज उस मण्डप में प्रवेश करने वाले किसी भी बाहरी व्यक्ति के प्राण हर लेता था। इसलिए उरूवेला काश्यप ने बुद्ध से तीन बार प्रार्थना की कि इस अग्निशाला में मत ठहरो। परन्तु बुद्ध ने तीनों बार हठ किया कि-नहीं मैं ठहरूँगा तो इसी अग्निशाला में ही और तीनों बार उरूवेला ने मना किया, पर भगवान बुद्ध ने हठ किया, तो उरूवेला ने कहा–

विहार महाश्रमण यथा सुखं ते।

अर्थात्- नहीं मानते हो तो महाश्रमण खुशी से ठहरो।

इसके बाद भगवान बुद्ध ने यज्ञशाला में प्रवेश किया और तृण बिछाकर आसन बाँध दिया तथा शरीर को सीधा कर एवं स्मृति को स्थिर करके वे बैठ गये।

भगवान बुद्ध के बैठते ही नागराज निकला और क्रोध से भर गया। वह फन को निकालकर अपने विष का प्रभाव विकीर्ण करने लगा। पहले तो विष का धुँआ निकला, बाद में

आस-पास चारों ओर भयंकर ज्वाला व्याप्त होने लगी।

नागराज की हरकत देखकर भगवान बुद्ध ने सोचा कि क्यों न इस नाग को शारीरिक क्षति पहुँचाए बिना ही उसकी सारी विष ज्वाला का हरण कर लूँ और इसे तेजहीन कर दूँ।

तब बुद्ध ने अपने योग बल से उससे भी ज्यादा भयंकर धुँआ छोड़कर ज्वाला जाल फैलाया। अग्निशाला के चारों ओर ज्वाला को देखकर उरूवेला काश्यप चिल्लाने लगा। हाय! परम सुन्दर महाश्रमण नाग द्वारा मारा जा रहा है।

अभिरूपोवत् भो महासमणो नागेन विहेठिस्तीति

(महावाग्गो १-२-३-१-३)

अन्त में भगवान बुद्ध ने अपने तपस्तेज से नागराज की भयंकर विष ज्वाला को ढक दिया और धीरे-धीरे उसके सारे विष को हरण कर उसे बिल्कुल निस्तेज कर दिया। बुद्ध ने उस भयंकर नाग को हाथ से पकड़कर पिटारी में रख दिया और प्रभात होने पर उसे ले जाकर उरूवेला काश्यप से कहा कि-**हे काश्यप! यह तेरा नाग है।** भगवान बुद्ध के इस अलौकिक चमत्कार को देखकर उरूवेला काश्यप आश्चर्य से स्तब्ध रह गया। भगवान बुद्ध ने उरूवेला काश्यप को १५ बड़े-बड़े चमत्कार दिखाये। अब उरूवेला काश्यप ने बुद्ध के पैरों में गिरकर कहा-

लभेप्या हं भन्ते भगवतो सन्ति के पव्वज्जं, लभेय्यं उपसम्पदन्ति।

अर्थात्–हे भन्ते! मुझे प्रव्रज्या प्राप्त हो, उपसम्पदा प्राप्त हो।

पहले तो बुद्ध ने उसे उपसम्पदा देने में आनाकानी की पर बाद में जब उसके पाँच सौ शिष्य भी अग्निहोत्र के सारे सामान को नदी में फेंककर बुद्ध के पास आये तो भगवान ने सभी को अपने धर्म में प्रविष्ट कर लिया। भगवान बुद्ध की यह पहली और सबसे बड़ी विजय थी।

(बौद्ध धर्म और विहार, पृष्ठ-६०-६१)

यह कथा निश्चित रूप से गलत है और बुद्ध को योगी सिद्ध करने के लिए बाद में गढ़ी गयी है। योगी के पास नाग भीगी बिल्ली की तरह स्वयं शान्त हो जायेगा, सिंह आदि भी कुत्ते के समान पूँछ हिलाकर जा बैठते हैं। उनका साहस वहाँ क्रोध दिखाना या हिंसक कार्यवाही करने का नहीं हो पाता है।

यह योगियों की आध्यात्मिक शक्ति के प्रभाव वश होता है। बुद्ध यदि योगी होते तो नागराज द्वारा विषैला धुँआ विकीर्ण करने की बात ही नहीं हो सकती थी।

और फिर नाग विषैला धुँआ नहीं छोड़ा करता है और न आग बरसाता है, तथा योगी भी सर्पों से मुकाबला नहीं किया करते हैं। बुद्ध जी योगी भी नहीं थे, यह इसी कथा से स्पष्ट है। यह झूठी कहानी उसके चेलों ने बुद्ध को योगी बनाने को गढ़ी है।

बुद्ध जी ने उरूवेला काश्यप को चेला तभी बनाया जब उसके ५०० चेले यज्ञशाला में से अग्निहोत्र का सारा सामान नदी में फेंक आये। इससे तो बुद्ध के घृणित विचारों का ही पता चलता है कि उसे यज्ञ आदि पवित्र कर्मों से कितनी घृणा थी।

'सूत्त निपात' में एक स्थान पर तो बुद्ध ने अग्निहोत्र को श्रेष्ठ कर्म कहा है और अपने सम्प्रदाय प्रवर्तन के चक्कर में यज्ञशाला में से अग्निहोत्र के पात्र व सामग्री को नदी में फिकवाने के बाद ही लोगों को चेला बनाने का कुकृत्य किया लिखा है।

हमारे विचार से यह सारी गल्पें बौद्धों ने ब्राह्मणों एवं वैदिक धर्म से विद्वेष के कारण लिखी हैं।

धर्म संघ के विस्तार के लिए हम देखते हैं कि बुद्ध जी ने कई जगहों पर अलौकिक चमत्कारों अर्थात् जादूगरी का प्रदर्शन किया और अन्धविश्वासियों पर अपनी प्रभुता जमाकर उन्हें अपने संघ में दीक्षित किया। हम गया के काश्यप बन्धुओं को देखते हैं कि वह बुद्ध के चमत्कारों के कारण ही संघ में आये।

ऋद्धि प्रदर्शन का काम राजग्रह के ब्राह्मणों को नीचा दिखाने के लिए उन्होंने कौशल में जाकर किया था। काश्यप में भी उन्होंने एक बार ऐसे ही जादूगरी के चमत्कार दिखाये थे।

बुद्ध जी ने एक चतुर राजनीतिज्ञ की तरह अपने संघ के विस्तार के लिए जादूगरों की तरह चमत्कार प्रदर्शनियों में बार-बार कई स्थानों पर काम लिया था।

वैशाली में एक बार अकाल पड़ा था। तब उन्होंने मंत्र जाप का सहारा लिया। इस तरह इन सारी बातों ने ही आगे चलकर बढ़ते-बढ़ते मन्त्रयान-तन्त्रयान और वज्रयान का रूप ले लिया तथा यही वज्रयान मन्त्र मद्य, माँस और मैथुन के प्रचार के कारण बौद्ध मत के विनाश का कारण बन गया था।

शिवजी द्वारा बुद्ध की प्रशंसा करने की गल्प

शैव मत वालों को बौद्ध मत की ओर मोड़ने के लिए बौद्धों ने एक चार सौ बीसी वाली अर्थात् धोखा देने वाली कथा गढ़ी थी, जिसमें महादेव जी से ही बौद्ध मत की प्रशंसा करवा दी गयी थी। देखिये वह कथा इस प्रकार है-

...उस समय मगध में मुद्गर गोमिन और शंकरपति नाम के दो भाई ब्राह्मण हुए। वे अपने कुल देवता महेश्वर की पूजा करते थे। उन दोनों ने बुद्ध और हिन्दू सिद्धान्तों में विद्वत्ता प्राप्त की।

लेकिन मुद्गर गोमिन सन्देह में रहता था और सोचता था कि महेश्वर ही श्रेष्ठ होगा। शंकरपति बुद्ध के ही प्रति श्रद्धा रखता था। उनकी माँ के प्रेरित करने पर पदश्रृंग की

साधना कर दोनों पर्वतराज कैलाश पर चले गये और महेश्वर के निवास स्थान पर दोनों ने महेश के वाहन श्वेत ऋषभ और उमादेवी को फूल तोड़ते देखा।

अन्त में स्वयं महादेव को सिंहासन पर आसीन हो धर्मोपदेश करते देखा। गणपति ने उन दोनों को अपने हाथों से उठाये हुए महादेव के पास रख दिया। थोड़ी देर बाद मानसरोवर से ५०० अर्हन्त उड़कर आये, तो महेश्वर ने उन्हें प्रणाम कर पाद धुलाकर तथा भोजन कराकर उन अर्हन्तों से धर्मोपदेश सुना।

यद्यपि दोनों भाइयों को बौद्ध धर्म के अधिक श्रेष्ठ होने का पता लग गया था तो भी उनके पूछने पर महादेव जी ने कहा कि मोक्ष केवल बुद्ध के मार्ग पर चलने से प्राप्त होता है, अन्य से नहीं। वे दोनों ब्राह्मण वेष-भूषा उतारकर बौद्ध बन गये।

(बौद्ध धर्म का इतिहास, पृष्ठ-३८-३९)

यह कथा स्पष्ट गप्प है। न शिवजी कथा सुनाते थे, न सिंहासन पर बैठते और न मानसरोवर पर अर्हन्त अर्थात् बौद्ध सिद्ध देवता रहते हैं। वहाँ कबूतर तो देखे गये हैं। अथवा हंस नाम के पक्षी रहते हैं।

अगर वे कबूतर ही बौद्धों के देवता हों तो दूसरी बात है। पर उन पक्षियों के पैर धुलाना, उनके उपदेश सुनना महादेव द्वारा नहीं होता था और अहिन्दू धर्म के मान्य देवता महादेव जी के महान व्यक्तित्व का मुकाबिला गौतम बुद्ध जैसे

माँसाहारी मनुष्य से नहीं किया जा सकता है।

यह सब बौद्धों की धूर्त्तता है, जो ब्राह्मणों, हिन्दुओं व उनके मान्य देवों की निन्दा करने के लिए उन्होंने भ्रष्ट कल्पित कहानियाँ गढ़-गढ़कर हिन्दुओं को व उनके धर्म को बदनाम करने का यत्न किया है।

इस प्रकार की झूठी कथाओं के द्वारा बौद्ध साहित्य स्वयं अविश्वसनीय बन गया है। ऐसे हथकण्डे धर्म प्रचार के लिए अपनाने वाले बौद्ध स्वयं भ्रष्ट लोग थे। इन्होंने ही हमारा साहित्य भी भ्रष्ट किया है। यह दो गल्प और भी देख लें-

बीस करोड़ बुद्ध सत्व बुद्ध के साथ थे

पुनः हे अजित! उस समय बीस करोड़ बोधि सत्व अर्थात् बुद्ध के अनुयायी बुद्ध भगवान का अनुकरण कर रहे थे।

(सद्धर्म पुण्डरीक, पृष्ठ-२०)

भारतवर्ष की आबादी भी उस जमाने में बीस करोड़ की नहीं थी। तब बीस करोड़ बुद्ध के अनुयायी सभा में कैसे आ गये और इतने लोगों के बैठने को जगह कहाँ से आयी होगी?

तीस सहस्र करोड़ जिन्नों की गल्प

बुद्ध जी ने कहा-हे भिक्षुओं! यह काश्यप पूरे तीस

सहस्त्र करोड़ जिन्नों के दर्शन करेगा तथा उनके संरक्षण में रहकर बुद्ध ज्ञान की प्राप्ति के लिए ब्रह्मचर्य का आचरण करेगा।

(सद्धर्म पुण्डरीक, पृष्ठ-१५३)

तीस सहस्त्र करोड़ का अर्थ हुआ ३० तथा इसके आगे १२ शून्य और जोड़ दिये जायें अर्थात् इतने क्या यह भी महा गपोड़ा नहीं है, जो बौद्ध धर्मियों ने अपनी धर्म पुस्तकों में लिख मारा है अथवा बुद्ध ने स्वयं कहा था?

पाँच सौ ऋषियों को एक घण्टे में अर्हन्त अर्थात् सिद्ध बना देने की गल्प

५०० ऋषियों द्वारा उपसम्पदा के लिए निवेदन करने पर आनन्द ने ऋषि के बल पर नदी के मध्य भाग में एक द्वीप का निर्माण किया। वहाँ भिक्षुओं के एकत्रित होने पर आर्यानन्द ने ऋषि से एक ही घण्टे में ५०० ऋषियों को क्रमशः उपसम्पन्न कर अर्हन्त पद पर प्रतिष्ठापित किया।

(बौद्ध धर्म का इतिहास, पृष्ठ-५)

अर्हन्त बनने के लिए लोगों को घोर तपस्या वर्षों तक करनी पड़ती थी, पर यहाँ एक घण्टे में ही अर्हन्त अर्थात् सिद्ध बना देने की गल्प बौद्धों ने गढ़ दी है और यह भी ५०० ब्राह्मण ऋषियों को नीचा दिखाने के लिए गढ़ी गयी है, यह पूर्णतः स्पष्ट है।

स्वयं बुद्ध जी तो सिद्ध नहीं बन पाये थे, पर उनके चेले बिना तपस्या के एक घण्टे में लोगों को पूर्ण सिद्ध फूँक मारकर बना देते थे। आजीब गल्प है।

इसी प्रकार की एक गल्प और देखें

आर्य माध्यन्दिन १०००० अर्हन्त पार्षदों से घिरे आकाश मार्ग से उड़ते हुए गमन कर उत्तर दिशा में उशीगिरि को चले गये।

(बौद्ध धर्म का इतिहास, पृष्ठ-६)

हम पीछे दिखा चुके हैं कि मुक्त बुद्ध लोग हिमालय की मानसरोवर झील में या उसके किनारे ठण्ड में रहते थे, ऐसा उनके शास्त्रों में लिखा है। वहीं से वे उड़कर आया करते थे और अर्हन्त बनने के बाद वहीं चले जाते थे।

आकाश में उड़ना उनको बौद्ध जी के चेले एक घण्टे में सिखा देते थे तथा वे मानसरोवर झील पर रहकर वहाँ मछली खाकर जिन्दा रहते थे। वे अर्हन्त इतने रागी भी होते थे कि महादेव जी की सभाओं में व्याख्यान देने व रोटी खाने पाँच-पाँच सौ की संख्या में आते और भोजन करके चले जाते थे।

मुक्त होने पर भी सिद्ध बौद्धों को रोटी, चावल और माँस खाने की लत नहीं जाती थी, यह स्पष्ट है। हमारी दृष्टि में तो यह बौद्धों का कोरा गपोड़ा है कि अर्हन्त कबूतरों की तरह उड़ते-फिरते थे।

बुद्ध के जन्म समय की गल्प

बुद्ध ने कहा- आनन्द! जिस समय बुद्ध सत्व तुषित लोक से च्युत हो माता के गर्भ में प्रविष्ट होते हैं, तो देव-मार ब्रह्मा सहित सारे लोक में श्रमण-ब्राह्मण-देव-मार ब्रह्मा सहित सारी प्रजा देवताओं के भी तेज को मात करने वाला अप्रमाण उदार महान प्रकाश लोक में प्रकट होता है।

जो वह घने अन्धकार से पूर्ण तमसा वृत दूसरे लोक हैं, जहाँ पर इतने तेजस्वी, इतने महानुभाव यह सूर्य, चन्द्र भी प्रकाश नहीं पहुँचा सकते, वहाँ पर भी उदार प्रकाश प्रकट होता है।

आनन्द! जब बोधि सत्व माता के गर्भ में रहता है तो बोधिसत्व माता का स्वभाव शीलवती होती है।

वह हिंसा, चोरी, व्यभिचार, झूठ, सुरापान आदि से विरत होती है ....।

आनन्द! बोधि सत्व के गर्भ में एक सप्ताह होने पर बोधि सत्व माता मृत्यु को प्राप्त हो तृषित लोक में उत्पन्न होती है ...... जैसे अन्य स्त्रियाँ नौ या दस माह गर्भ को धारण कर प्रसव करती हैं, उस प्रकार बोधि सत्व माता प्रसव नहीं करती।

बोधिसत्व माता खड़े रहकर बोधिसत्व को जानती है। जब बोधिसत्व माता की कुक्षि से निकलता है तो पहले उसे देवता ग्रहण, बाद में मनुष्य जन्म होने पर बोधिसत्व अभी

पृथ्वी को नहीं प्राप्त होता कि चार देव उसे ग्रहण कर माता के सामने रख देते हैं।

वह बोधिसत्व माता की कुक्षि से निकलता है तो आकाश में एक शीतल, दूसरी गर्म दो जल की धाराएं प्रकट होती हैं, जिनसे बोधिसत्व और माता का उदक कृत्य अर्थात् स्नान-ध ेना आदि किया जाता है।

सद्यः उत्पन्न बोधि सत्व पैर को समरथ रख पृथ्वी पर खड़ा होता है, उत्तराभिमुख सात कदम चलता है, श्वेत वस्त्र धारित हो सारी दिशाओं का अवलोकन करता और आर्य वाणी को बोलता है, यथा-

मैं लोक में ब्रह्मा हूँ, श्रेष्ठ हूँ, ज्येष्ठ हूँ, यह अन्तिम जन्म है, अब पुनर्भव नहीं। ॥१२३॥

(मज्झिमनिकाय पृष्ठ-४१०-४११)

इस लेख के गल्प होने में कोई सन्देह नहीं करेगा। खड़े होकर प्रसव का करना व उसके बाद चार देवताओं का आना, आकाश में गर्म और ठण्डी जल धाराओं का वहीं पैदा होना, तुरन्त बालक का पृथ्वी पर चलना और घमण्ड भरी बातें करना कि-**मैं ब्रह्मा हूँ, ज्येष्ठ हूँ, आदि** बुद्ध जी द्वारा कहे गये वाक्य यह सब बौद्ध लेखकों के गपोड़े हैं।

जन्म के बाद बुद्ध जी की माता का निधन हो गया था, तो क्या हमेशा सभी बौद्धों की माताएं सात दिन बाद मर जाती हैं?

सम्पूर्ण बौद्ध साहित्य में बुद्ध द्वारा कहीं गई बातें वस्तुत: बाद में उनके चेलों द्वारा गढ़-गढ़कर लिखी गयीं हैं। स्वयं बुद्ध ने कभी कोई किताब नहीं बनाई थी। सार बौद्ध ग्रन्थ की बातें बुद्ध मत को श्रेष्ठ साबित करने के लिए बौद्धों द्वारा लिखी गयीं बातें हैं। जिनको कोई भी प्रमाणित नहीं मान सकता है।

बुद्ध जी के पूर्व जन्मों की याद की गल्पें

बुद्ध जी ने ८३ बार सन्यासी, ५८ बार राजा, ४३ बार वृक्ष देव, २६ बार उपदेशक, २४ बार प्रवक्ता, २० बार इन्द्र, १८ बार वानर, १३ बार वणिक, १२ बार श्रेष्ठी, १२ बार कुक्कुट अर्थात् मुर्गा, १० बार मृग, १० बार सिंह, ८ बार हंस, ६ बार घोड़ा, ४ बार वृक्ष, ३ बार कुम्भकार, ३ बार चाण्डाल, २ बार मछली, २ बार गजयन्ता अर्थात् हाथी, २ बार चूहा, १ बार बढ़ई, १ बार लोहार, १ बार मेंढ़क, १ बार खरगोश, योनियों में जन्म लिया। अर्थात् कुल ३६३ बार जन्म लिया।

(प्रांग मौर्य विहार अध्याय-१२, पृष्ठ-१५२)

किसी भी व्यक्ति के लिए जब वर्तमान जन्म की ही बचपन, जवानी की बातों को स्मरण रखना सम्भव नहीं होता है तो ३६३ पूर्व जन्मों की बातों को कोई जान सके, यह गपोड़ा है और बुद्ध के गप्पी चेलों द्वारा बौद्ध ग्रन्थ में लिखा

गया अथवा इस गपोड़े की जिम्मेवारी बुद्ध जी की है।

बुद्ध जी ने ९१ कल्पों तक की याद का दावा किया था तो क्या ३६३ जन्मों में ही ९१ कल्पों का समय पूरा कर लिया था।

नोट- एक सृष्टि की आयु का एक कल्प होता है। एक सृष्टिकाल चार अरब बत्तीस करोड़ वर्ष का होता है।

बुद्ध और माँसाहार

प्राय: कहा जाता है कि महात्मा बुद्ध अहिंसावादी थे। अहिंसा का अर्थ है मनसा वाचा, कर्मणा किसी भी प्रकार से प्राणी को कष्ट न पहुँचाना।

माँसाहार जो बिना जीव का वध किये सम्भव नहीं है। जो व्यक्ति माँसाहारी हो, उसको अहिंसक नहीं कहा जा सकता है। बौद्ध साहित्य में ऐसे प्रमाण मिलते हैं, जिनमें बुद्ध जी के माँसाहारी होने की पुष्टि होती है।

यही नहीं वरन् उन्होंने भिक्षुओं को भी माँसाहार की छूट दे दी थी। आज भी सभी बौद्धधर्मी माँसाहारी हैं। बौद्ध ग्रन्थ **'विनय पिटक'** पृष्ठ २४५ पर बुद्ध जी ने अपने शिष्यों से कहा है-

भिक्षुओं! जान-बूझकर अपने उद्‌देश्य से बने माँस को नहीं खाना चाहिए। जो खाये उसे दूक्कट दोष हो।

भिक्षुओं! मैं अनुमति देता हूँ कि अपने लिए मारे हुए, देखे-सुने, सन्देह युक्त इन तीन बातों से शुद्ध मछली और

माँस खाने की॥११०॥

इसका स्पष्ट अर्थ यह है कि माँस खाना तो जायज है, पर वह माँस खाने वाले के लिए न पकाया हुआ न हो या उसी के लिए मारकर प्राप्त न किया गया हो। ऐसा माँस खाना बौद्ध मत में जायज़ है, जो किसी अन्य के लिए तैयार किया गया हो। पर बौद्ध भिक्षु उसे खा सकेगा। केवल अपने ही लिए तैयार किये गये माँस को खाने के लिए नाजायज़ बताया गया है।

बौद्ध मत में चर्बी खाना जायज है

बुद्ध ने कहा–

हे भिक्षुओं! मैं अनुमति देता हूँ कि चर्बी की दवाई की जैसे कि रीछ, मछली, कुत्ते, सूअर और गधे की चर्बी काल से पका तेल के साथ मिलाकर सेवन करने की।

(विनय पिटक, पृष्ठ-२१६)

बौद्ध मत में कच्चा माँस खाना व खून पीना जायज है

उस समय तक भिक्षु को अ-मनुष्य अर्थात् भूत-प्रेत का रोग था। आचार्य उपाध्याय इसकी सेवा करते-करते निरोग न कर सके। सुअर मारने के स्थान पर जाकर उसने कच्चे माँस को खाया, कच्चे खून को पिया और उसके अमनुष्य अर्थात् भूत-प्रेत वाला रोग शान्त हो गया। भगवान बुद्ध से यह बात

कहीं

वे बोले-

भिक्षुओं! अनुमति देता हूँ, अमनुष्य अर्थात् भूत-प्रेत वाले रोग में कच्चे माँस और कच्चे खून की॥२३॥

(विनय पिटक, पृष्ठ-२१८)

पाखाना खाने की अनुमति

उस समय एक भिक्षु ने विष खा लिया था भगवान से यह बात कही। उन्होंने कहा-

भिक्षुओं! अनुमति देता हूँ, पाखाना पिलाने की॥

(विनय पिटक, पृष्ठ-२३२)

स्वयं बुद्ध का माँस खाना

बुद्ध चर्चा ग्रन्थ में पेज १४० पर लिखा है-

सिंह सेनापति भगवान से बोला-

भन्ते! भिक्षु संघ के साथ भगवान मेरा कल का भोजन स्वीकार करें।

भगवान ने मौन रूप में स्वीकार किया।

तब सिंह सेनापति ने एक आदमी से कहा-

हे आदमी! जा तू तैयार माँस को देख।

तब सिंह सेनापति ने उस रात के बीतने पर अपने घर में उत्तम खाद्य भोज्य तैयार करा भगवान को काल की सूचना दी।

भगवान पूर्वान्ह समय अर्थात् चीवर पहिन कर पात्र चीवर ले जहाँ सिंह सेनापति का घर था, वहाँ गये।

जाकर भिक्षु संघ के साथ बिछे आसन पर बैठे। उस समय बहुत से निघण्ट अर्थात् जैनी साधु वैशाली में एक सड़क से दूसरी सड़क पर एक राह चौरास्ते से बाँह उठाकर चिल्ला रहे थे। आज सिंह सेनापति ने मोटे पशुओं को मारकर श्रमण गौतम के लिए भोजन पकाया।

श्रमण गौतम जान-बूझकर अपने ही उद्देश्य से तैयार किये हुए उस माँस को खाता है। इससे यह भी ध्वनित होता है कि बौद्धों की ही तरह उस समय जैनियों में भी स्वयं के लिए मारे गये जानवर के माँस को छोड़कर अन्यों के लिए पकाये गये माँस को खाने की प्रथा थी।

बौद्धों को किस तरह का माँस खाना विहित है? इसका स्पष्टीकरण

गौतम ने कहा-

अद्रष्ट मेरे लिए मारा गया हो, यह देखा न गया हो। अश्रुत मेरे लिए न मारा गया हो यह सुना न हो। अपरिशंकित मेरे लिए न मारा गया हो, इसमें सन्देह न हो। इन तीन कोटि के परिशुद्ध माँस की मैंने अनुज्ञा दी।

इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि बौद्ध घनघोर माँसाहारी हैं। उसमें सूअर की चर्बी व रोग में पाखाना तक खाने में जायज

माना गया है।

सूअर का माँस तक खाना भी जायज है। पाखाना खाने वाले सूअर का माँस भी जिसमें जायज है, उससे ज्यादा पतित और कौन होगा।?

स्वयं बुद्ध जी की भी मृत्यु सूअर का माँस खाने से हुई थी देखिये जब भगवान बुद्ध के पेट की बीमारी जब कुछ कम हुई तो वे महावन की रूटागार शाला में गये। यहाँ बुद्ध ने भिक्षुओं को बताया कि मेरे परिनिर्वाण का काल अब केवल तीन माह का रह गया है। मैंने अपना काल पूरा कर लिया है।

भोग नगर से चलकर भगवान मल्लों की नगरी पावापुरी* में गये। चुन्दकरमार के बगीचे में ठहरे। चुन्द ने बुद्ध को भोजन के लिए आमंत्रित किया। भोजन में उसने शूकर अर्थात् सूअर का माँस दिया, ज़िसके खाने से उनके पेट की बीमारी और बढ़ गयी।

भगवान बुद्ध पावापुरी कुशीनारा के रास्ते से जा रहे थे, कि दर्द की अधिकता से उनका चलना कठिन हो गया। वहीं

*यह स्थान बिहार में नालन्दा के समीप स्थित है, जहां पर मैं स्वयं सर्वप्रथम सन् 1973 ई0 में गया था, जहां पर मैंने वह सभी उजड़े हुए स्थान देखे जो मुगलकाल की उस क्रूर अवस्था का बयान कर रहे थे, जिन्होंने इस हरे-भरे बगीचे को इस दयनीय दशा में लाकर खड़ा कर दिया था, जिसे देखकर आज हृदय द्रवित हो उठता है।

-लाजपत राय अग्रवाल (वैदिक मिशनरी)

दो साल वृक्षों के बीच उन्होंने आनन्द से चौपटी बिछवाई और उस पर लेट गये। उन्हीं साल वृक्षों के बीच बुद्ध का परिनिर्वाण अर्थात् मृत्यु हुई। उस समय उनकी आयु पूरी ८० साल की थी।

(बौद्ध धर्म और विहार पृष्ठ १३२)

जान-बूझकर सूअर का माँस खाने का अन्य विवरण

बुद्ध जी भोग नगर से पावापुरी गये। वहाँ वे झुण्ड नामक एक लोहकार पुत्र के आम्रवन में ठहरे जिसने उन्हें सुकरमाद्दव अर्थात् सूअर का माँस पकाकर भिक्षुओं को भोजन के लिए दिया।

बुद्ध ने सूकर माद्दव केवल अपने लिए ग्रहण किया और उसे भिक्षुओं को देने से यह कहकर मना कर दिया कि उसे पचा नहीं सकेंगे। उन्होंने स्वयं सूअर का माँस खा तो लिया, परन्तु बहुत बीमार पड़ गये और उन्हें असह्य वेदना होने लगी।

(उत्तर प्रदेश में बौद्ध धर्म का विकास, पृष्ठ-९३)

पाखाना खाने वाले सूअर का माँस खाना या पाखाना खाना इन दोनों बातों में ज्यादा अन्तर नहीं है।

बुद्ध को अहिंसावादी मानने वाले लोग अब अपनी भूल का संशोधन कर लें।

मृत्यु के बाद बुद्ध-शव की दाह व्यवस्था बुद्ध द्वारा अपनी पूजा का विधान

'महापरि निर्वाण सुत्त' ग्रन्थ में पृष्ठ १४२ पर लिखा है कि–

आनन्द ने बुद्ध से कहा–

भन्ते! तथागत के शरीर को कैसे करना चाहिए

गौतम ने कहा–

जैसे आनन्द! चक्रवर्ती के शरीर के साथ करना होता है, वैसे तथागत के शरीर के साथ करना चाहिए।

भन्ते! राजा चक्रवर्ती के शरीर के साथ कैसे किया जाता है?

आनन्द! राजा चक्रवर्ती के शरीर को नये वस्त्र से लपेटते हैं। नये वस्त्र से लपेटकर धुनी रूई से लपेटते हैं। धुनी रूई से लपेटकर नये वस्त्र से लपेटते हैं।

इस प्रकार लपेटकर तेल की लोह द्रोणी में रखकर दूसरी लोह द्रोणी से ढ़ककर सभी गन्धों काष्ठ की चिता बनाकर राजा चक्रवर्ती के शरीर को जलाते हैं।

जलाकर बडे चौरास्ते पर राजा चक्रवर्ती का स्तूप बनाते हैं। वहाँ आनन्द! जो माला गन्ध या चूर्ण चढ़ायेंगे या अभिवादन करेंगे या चित्त प्रसन्न करेंगे, वह दीर्घकाल तक उनके हित सुख के लिए होगा।

हमारे विचार में यह व्यवस्था बुद्ध के शिष्यों के द्वारा

लिखकर पुस्तकों में जोड़ी गयी है। स्वयं बुद्ध जी ने नहीं की थी।

और यदि इसे बुद्ध जी द्वारा प्रस्तावित माना जायेगा तो उससे प्रकट होगा कि मरणोपरान्त अपनी पूजा कराने के लिए यह सब कुछ कहा गया था, जो कि किसी भी सन्त व महापुरुष ने कभी अपने बारे में नहीं कहा है।

यज्ञों में पशुबलि

बौद्ध साहित्य देखने से यह प्रकट होता है कि उस युग में छोटी जातियों में माँसाहार का प्रचार ज्यादा था तथा कुछ लोग यज्ञों में भी पशुबलि करने लगे थे। बुद्ध ने यज्ञों में पशुबलि का निषेध किया था। इस विषय में हम उदाहरण प्रस्तुत करते हैं–

बौद्ध धर्म और विहार पुस्तक में पृष्ठ ९३-९४ पर लेख आता है, देखिए–

प्रथम प्रमाण

सकल शास्त्र निष्णात कुटदत्त नामक ब्राह्मण खाणमत ग्राम में निवास करता था। वही उस ग्राम का मालिक था। तीन सौ विद्यार्थियों को वेद पढ़ाता था।

जिस समय भगवान बुद्ध वहाँ गये थे, कुटदत्त यज्ञ करने के लिए उद्यत था। उसके यज्ञ में भाग लेने के लिए अनेक

स्थानों से अनेक ब्राह्मण वहाँ आये हुए थे।

उसके यज्ञ में स्थूल स्थान पर ७०० बैल, ७०० बछड़े, ७०० बछियाँ, ७०० बकरियाँ और ७०० भेड़े बलि कर्म के लिए बँधी हुई थीं उस समय बुद्ध वहाँ पधारे।

कुटदत्त को जब यह मालूम हुआ कि अपने संघ के साथ बुद्ध हमारे गाँव के आम्रवन में आकर ठहरे हुए हैं, तब उसने सोलह परिष्कार वाले यज्ञ की विधि पूछने के लिए उसके पास जाने का विचार किया।

यज्ञ में भाग लेने के लिए आये हुए ब्राह्मणों ने इसका विरोध किया कि यदि आप बुद्ध के पास जायेंगे तो आपकी लघुता सिद्ध होगी और बुद्ध का बड़प्पन प्रकट होगा। आप वेद ज्ञाता हैं, इससे ब्राह्मण धर्म की हीनता प्रमाणित होगी।

उस पर कुटदत्त ने कहा कि आप लोग बुद्ध की महिमा नहीं पहचानते हैं वे तीर्थंकरों में अग्रणी हैं। दूसरे बिम्बसार प्रसेनजित तथा पौष्कर जैसे राजाओं से वे पूजित हैं। और सबसे बड़ी बात तो यह है कि जो कोई भी विशिष्ट अतिथि हमारे गाँव में आये, उसका सम्मान और यथोचित सत्कार करना हमारा धर्म है .... इतना सुनने पर सभी ब्राह्मण राजी हो गये।

अन्त में कुटदत्त सभी ब्राह्मणों को साथ लेकर भगवान बुद्ध के पास गया और प्रणाम करके एक ओर बैठ गया। कुटदत्त ने हाथ जोड़कर भगवान बुद्ध से पूछा–

भगवन! सुनते हैं कि आप सोलह परिष्कार सहित त्रिविध यज्ञ सम्पदा को जानते हैं। मैं यह विधि नहीं जानता। मैं अभी महायज्ञ करना चाहता हूँ। कृपा कर सोलह परिष्कार वाली यज्ञ विधि बतलाइए।

भगवान बुद्ध ने कुटदत्त को श्रद्धा सम्पन्न पाया। उन्होंने सोलह परिष्कार वाली अहिंसक यज्ञ की विधि बतलाई और इस यज्ञ के करने वाले महाविजित राजा की कहानी भी कही, जिसके यज्ञ में अपने पूर्व जन्म में पुरोहित का काम स्वयं बुद्ध ने किया था। उसके बाद बुद्ध ने उसे दान यज्ञ, त्रिशरण यज्ञ, शिक्षाप्रद यज्ञ, शीलयज्ञ, समाधि यज्ञ और प्रज्ञा यज्ञ की व्याख्या बतलाई। उसके बाद कुटदत्त ने त्रिशरण में प्रवेश किया और उपासक धर्म स्वीकार कर लिया। उसके यज्ञ में बलिकर्म के लिए आये सभी पशुओं को उसी क्षण मुक्त कर दिया और दूसरे दिन बुद्ध को संघ के साथ भोजन पर बुलाया।

यह कथा भी गढ़ी गयी है। स्पष्ट है क्योंकि कुटदत्त ने बुद्ध को तीर्थंकरों में अग्रणी बताकर प्रशंसा की है, जबकि वे उस समय तक तीर्थांकर नहीं बने थे। कुटदत्त नाम ही कटु है, जो कोई नहीं रख सकता है। यह निराधार व कपोल-कल्पित कथा है।

दूसरा प्रमाण
अजामेध व गौमेध की गल्प

उन दिनों पश्चिम मालवा से अदर्य नामक ब्राह्मण निर्मुकुट राजा के रूप में राज्य करता था। वह प्रतिदिन एक-एक हजार बकरों का वध कराकर उनके रक्त व माँस से हवन करता था। उसके एक हजार यज्ञ कुण्ड थे। वह अपने सभी ब्राह्मण अनुयायियों से अपनी-अपनी सम्पत्ति के अनुकूल अजामेध हवन कराता था और अब्राह्मणों से भी यज्ञ की सामग्री जुटवाता था।

किसी समय उसने गौमेध कराने की इच्छा से भार्गव जाति के भृकु राक्षस नामक ऋषि को आर्मंत्रित किया। जिसमें दस हजार उजती गायों का संग्रह किया गया। संबहुल ब्राह्मणों को निमंत्रण दिया गया। दान के अन्य बहुत से सामान भी सजाकर जब वह यज्ञ प्रारम्भ करने लगा तो तभी आर्य श्री घीतिकहर्विमूः वहाँ पर आ पहुँचे। फलतः वहाँ किसी भी उपाय से न अग्नि का प्रज्वलन किया जा सका, न गौ का वध किया जा सका, न इन्हें घायल किया जा सका, और न ही ब्राह्मण द्वारा वेद मन्त्रों का उच्चारण ही हो सका। इस पर भृगुराक्षस ने कहा कि इस श्रमण के प्रभाव से यज्ञ में विघ्न पड़ा है। सभी के द्वारा उन पर पत्थर-लाठी और धूल फेंकने पर वे सब पुष्प और चन्दन चूर्ण में परिणित होते

नजर आये तो उन लोगों ने श्रद्धा से उनके चरणों में प्रणाम कर क्षमा याचना की और कहा-

हे आर्य! क्या आज्ञा देते हैं?

हे ब्राह्मणों! इन जीवों को छोड़ दो।

(बौद्ध धर्म का इतिहास, पृष्ठ १७)

तीसरा प्रमाण

पाँच हजार मनुष्यों का यज्ञशाला में वध वाली गल्प

उन दिनों मिथ्या दृष्टि वाले ब्राह्मणों के प्रोत्साहित करने से राजा अशोक बलिदान करने में प्रयत्नशील रहता था। विशेषतः भृगु जाति के गौकर्ण नामक़ ऋषि ने बताया था कि दस सहस्त्र मनुष्यों का वध कर यज्ञ करने से राज्य का विस्तार होगा तथा मोक्ष का कारण बनेगा।

अशोक ने यज्ञशाला बनवाई और दस हजार मनुष्यों का वध कर सकने वाले आदमी की सर्वत्र खोज कराई। अन्त में तिरहुत से एक चाण्डाल मिला। .... उसने यज्ञशाला में लगभग पाँच हजार मनुष्यों का वध किया। उस समय राजा का पूर्व नाम बदल गया और वह "चाण्डाशोक" कहलाया। बौद्ध श्रमणों के उपदेश पर राजा ने यह बलिदान बन्द करके यज्ञशाला को तुड़वा दिया।

(बौद्ध धर्म का इतिहास, पृष्ठ १९-२०)

सहस्त्रों हजार गौओं के यज्ञ में वध की गल्प

चौथा प्रसंग इस प्रकार है-

बुद्ध ने कहा ब्राह्मण तब तुण्डल, शयन, वस्त्र, घी और तेल माँगकर। धर्म के साथ निकाल कर तब यज्ञ करते थे। यज्ञ उपस्थित होने पर वह गाय को नहीं मारते थे॥१२॥

जैसे माता-पिता, भ्राता और दूसरे बन्धु हैं, वैसे ही गाय हमारी परम मित्र हैं, जिसमें औषधि उत्पन्न होती है॥१३॥

यह नन्नदा, वलता, वर्णता तथा सुखदा है। इस बात को जानकर वे गाय को नहीं मारते थे॥१४॥

तब ब्राह्मणों से प्रेरित होकर रथर्षभ राजा इक्ष्वाकु ने अनेक सौ हजार गायें हनन कीं॥२४॥

जो न पैर से, न सींग से, न किसी अंग से ही मारती हैं जो गायें भेड़ के समान प्रिय और घड़े भर दूध देने वाली हैं। इन्हें सींग से पकड़कर राजा ने शस्त्र से मारा॥२६॥

तब देवता, पितर, इन्द्र, असुर राक्षस चिल्ला उठे **अधम हुआ'** जो-जो गाय के ऊपर वज्र गिरा॥२७॥

पहले तीन ही रोग थे-इच्छा, क्षुदा और जरा। पशु हिंसा समारम्भ होने से अठानवे हो गये॥१२८॥

ऐसा करने पर महाशालों ने भगवान से कहा-

"आश्चर्य! हे गौतम! अद्भुत!!! यह हम आप गौतम की शरण आते हैं, धर्म और भिक्षु संघ की भी। आज से

आप गौतम! हम श्री बुद्ध शरणागत में समझें॥

(बुद्धचर्या, पृष्ठ ३४१-३४२-३४३)

उपरोक्त चारों स्थल वास्तविक ऐतिहासिक घटनाओं के रूप में स्वीकार नहीं किये जा सकते हैं। प्रथम दृष्टान्त में कुटदन्त का यह कहना कि-

आप लोग बुद्ध की महिमा नहीं पहचानते हैं। वे तीर्थांकरों में अग्रणी हैं।

यह प्रकट करता है कि बुद्ध का ब्राह्मणों पर प्रभुत्व दिखाने के लिए और उनका यश बढ़ाने के लिए यह कथानक गढ़ा गया है। यज्ञ की वेदी पर वध करने के लिए तीन हजार पाँच सौ पशुओं का वहाँ होना ही गल्प है।

यज्ञ वेदी कितनी भी बड़ी हो, पर बड़ा तालाब नहीं हो सकती जिसमें तीन हजार पाँच सौ जानवरों को काटकर भरा जा सके। यज्ञ के यजमान अपने हाथ से यज्ञीय पदार्थ की आहुति देता है। आहुति वेदी की अग्नि के मध्य में दी जाती है। विशाल तालाब में आहुति देना भी सम्भव नहीं है।

अत: यज्ञों व ब्राह्मणों को गौवध के बहाने बदनाम करना ही इन मिथ्या कथाओं को गढ़े जाने का उद्देश्य रहा है और यह भी प्रकट करना रहा है कि बुद्ध जी पशुबलि के यज्ञों में विरोधी थे।

शेष तीनों दृष्टान्त भी सर्वथा कपोल-कल्पित हैं। इनका लक्ष्य ब्राह्मणों की निन्दा करना, हिन्दू धर्म को बदनाम करना

तथा बौद्धों ने पशुबलि यज्ञ अपने उपदेशों व प्रभावों से बन्द कराये थे, यह दिखाना मात्र है और इसीलिए ये पशुबलि व नरबलियों की मिथ्या कल्पना करके बौद्धों ने कथाएं गढ़ी हैं।

गायों की जो प्रशंसा की है वह तो ठीक है, पर इसका उद्देश्य भी यज्ञ प्रथा तथा ब्राह्मणों को बदनाम करना मात्र रहा है।

कथा में यह लिखा है कि **"राजा इक्ष्वाकु"** ने कई लाख गायों को सींग से पकड़कर तलवार से काट डाला" सर्वथा मूर्खतापूर्ण है। एक बड़े पशु की गर्दन काटने में पूरी शक्ति से तीक्ष्ण तलवार से वार करने पर भी दो-तीन वार करने पड़ेंगे। कई लाख गायों के सिर काटने में एक नहीं हजारों आदमियों के हाथ थककर टूट जायेंगे। और इस कुकर्म में दिन नहीं कई साल लगेंगे।

ऐसे बड़े लाखों जानवरों के हाड़-माँस तथा रक्त आदि को भरने के लिए कितने लम्बे-चौड़े कुण्ड की जरूरत होगी, कोई हिसाब लगाकर देखेगा तो बौद्धों की इन बेतुकी बातों को मूर्खतापूर्ण बताये बिना नहीं रहेगा।

जो ब्राह्मण लोग सदैव गौपूजक रहे हैं, वे गौवध की बात लिख ही नहीं सकते थे और यज्ञ कुण्ड भी दो-तीन गज लम्बे-चौड़े हो सकते थे। सैकड़ों गज लम्बे गहरे नहीं।

बौद्ध धर्म प्रारम्भ से ही ब्राह्मण धर्म का विरोधी रहा है। इसका लक्ष्य ब्राह्मणों व हिन्दू धर्म को व उसके सिद्धान्तों को

बदनाम करना तथा क्षत्रियों को ऊँचा उठाना था। यही बात अन्य विद्वानों ने भी स्वीकार की है। **'बौद्ध धर्म और बिहार'** ग्रन्थ में उसके विद्वान लेखक के निम्न उदाहरण दृष्टव्य हैं-

बौद्ध धर्म ब्राह्मण विरोधी था

भगवान बुद्ध ने जहाँ-जहाँ वर्णों के नाम गिनाये हैं, वे सर्वत्र ब्राह्मण से पहले क्षत्रिय का ही नाम लेते हैं। इतना ही नहीं तीर्थांकर महावीर और भगवान बुद्ध ने क्षत्रियोत्कर्ष के लिए जितना बड़ा काम किया, उतना उपनिषदकाल के सभी ब्रह्मविद क्षत्रिय राजाओं ने मिलकर भी नहीं किया।

इस क्षत्रियोत्कर्ष का विकसित रूप ही इस पूर्वीय भाग में जैन धर्म और बौद्ध धर्म के माध्यम से दिखाई पड़ा।

सच पूछा जाये तो ये दोनों धर्म ब्राह्मण व क्षत्रिय संघर्ष में क्षत्रियों की उस विजय वैजयन्ती के प्रतीक हैं, जो बिहार प्रदेश में उड़ी थी।

(बौद्ध धर्म और बिहार, पृष्ठ १०)

यद्यपि बुद्ध ब्राह्मणों और ब्राह्मण धर्म के विरोधी थे। तथापि बौद्ध धर्म के उन्नयन में ये ब्राह्मण ही अग्रणी हुए, जिनमें सारिपुत्र, महामौद्गल्यायन, महाकाश्यप, रैवत, मौग्गलिपुत्र तिष्य, नागसैन नागार्जुन, अश्वघोष, असंग बसु बन्धु बुद्धघोष आदि प्रमुख थे। स्वयं बुद्ध को अपने धर्म प्रचार के लिए

इनका सहारा लेना पड़ा।

(बौद्ध धर्म और बिहार, पृष्ठ ३२)

ब्राह्मणों को बदनाम करने के लिए ही बौद्ध साहित्य में यज्ञों के अन्दर लाखों पशुओं के वध का निराधार प्रचार किया गया। इन्हीं लोगों के द्वारा पुराण साहित्य में राजा रन्तिदेव आदि के द्वारा लाखों गायों का भोजनार्थ वध करने की गल्प गढ़कर जोड़ी गयी थीं तथा आर्य साहित्य को बौद्धों द्वारा ही भ्रष्ट किया गया था।

देश में मद्य, माँस और मैथुन का खुला प्रचार इन्हीं भ्रष्ट बौद्धमार्गियों द्वारा किया गया है। जो दोष, जो गन्दगी इन बौद्धों ने हिन्दू समाज में पैदा कर दी थी, उसी कारण हमारा देश, हमारा श्रेष्ठ धर्म, हमारी संस्कृति संसार में बदनाम हुई।

देश की पराधीनता का मुख्य कारण इन बौद्धों द्वारा कायरता का प्रचार करना था, जिससे थोड़े से मुस्लिम हमलावर इस देश की दुर्गति बनाने में सफल हुए थे।

यज्ञ शब्द का अर्थ देव पूजा, संगतिकरण और दान होता है अर्थात् जिसमें विद्वानों का सत्कार हो और पदार्थों का यथोचित् मात्रा में संयोग होकर होम किया जाये तथा होम के द्वारा घृत आदि पदार्थों को प्राणी-अप्राणी जगत तक पहुँचाया जाये। दान, परोपकारार्थ किये जायें, उसे **'यज्ञ'** कहते हैं।

यज्ञ सामग्री में सुगन्धित रोग नाशक एवं पौष्टिक पदार्थों

का प्रयोग होता है, जिससे रोग का निवारण होकर वायु सुगन्धित बनता है, सभी का स्वास्थ्यवर्धन होता है। जहाँ यज्ञ होते हैं वहाँ से दूर-दूर तक के लोगों के वायु की गन्ध से चित्त प्रफुल्लित हो जाते हैं, जलवायु निरोग और पौष्टिक बन जाते हैं।

आप एक अण्डे को आग पर भूनें या माँस को आग में डालकर जलायें तो उसकी भीषण दुर्गन्ध के कारण वहाँ बैठना भी दूभर हो जायेगा। पर कोई भी फल मेवा अर्थात् अखरोट-बादाम, किशमिश, छुआरा आदि जलायें तो सुगन्धि पैदा होगी। तब विद्वानों के यज्ञों में लाखों या हजारों पशुओं का काटकर जलाने की बात को कौन मान लेगा? उससे तो सारा वायुमण्डल ही विषाक्त बन जायेगा। ऐसा राक्षसी कर्म कोई भी नहीं कर सकेगा।

बौद्धों ने यज्ञों और ब्राह्मणों को बदनाम करने के लिए ऐसा कहा है। कभी किसी मूर्ख ने एक-दो पशु काट डाला है तो उससे यज्ञीय परम्परा व यज्ञीय विज्ञान को बदनाम करना बौद्धों का घृणित कार्य था, जो उन्होंने ब्राह्मणों से दोष के कारण व अज्ञानवश किया था। कुछ अज्ञानी लोगों ने यदि यज्ञ की पवित्र विधि को भ्रष्ट किया था तो इससे यज्ञ विज्ञान दूषित नहीं हो जाता है।

बौद्ध साहित्य में दैनिक होम करने का समर्थन मिलता है। बुद्ध जी ने इसका निषेध नहीं किया है। इस विषय में बुद्ध

ने कहा है कि–

अग्निहोत्र मुख्य है। छन्दों में गायत्री मुख्य है। मनुष्यों में राजा मुख्य है। नदियों में सागर मुख्य है।

(सूत्त निपात, पृष्ठ १२५)

बौद्धों के द्वारा यज्ञों में पशुबलि की क्रिया का निषेध किया जाना सर्वथा उचित कार्य था, चाहे वह उस समय कुछ ही लोगों द्वारा कहीं-कहीं किया जाने लगा हो। किन्तु स्वयं उनका माँसाहारी होना और माँसाहार की अनुमति देना उनका अत्यन्त गलत कार्य था, जो कि **'महात्मा'** उपाधि धारण करने वाले महान व्यक्ति की स्थिति के अनुरूप नहीं था।

महात्मा लोग तो सभी प्राणियों को स्वात्मवत् ही देखते हैं। वे हिंसा कर्म की स्वीकृति कैसे दे सकत हैं।

बुद्ध जी के बौद्ध मत प्रचार के हथकण्डे

बौद्धमत प्रचार में बुद्ध जी ने चमत्कार दिखा-दिखाकर भी लोगों को प्रभावित किया था। उन्होंने जब देखा कि लोग उनकी व्यर्थ कल्पनाओं पर विश्वास नहीं करते और उनके नये मत में नहीं आते तो उन्होंने निम्न सम्प्रदायों में अपना सम्प्रदाय फैलाने व जनता को फंसाने के लिए दूसरे गलत रास्ते भी अपनाये, देखिए इतिहासकार लिखता है कि–

अपनी अविद्या और उच्च वर्ग के सत्संग के अभाव के कारण मगध की गरीब जनता अपनी संस्कृति को भूख को

भूत-प्रेतों की पूजा तथा उत्सवों में उनके प्रति श्रद्धा के फूल चढ़ाकर मिटाती थी।

ये गरीब लोग इन्हीं विविध क्रियाओं के द्वारा अपने उद्धार के लिए मार्ग प्रशस्त करते थे, जिसे अपनाकर बुद्ध ने गरीबों के मन में अपने मन की भावना को जगाया और बौद्ध धर्म को सर्व साधारण के लिए सुलभ बना दिया।

ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार करने वाले बुद्ध ने भूत-प्रेत यज्ञादि का जो अस्तित्व स्वीकार किया, वह लोक भावना की अपेक्षा को ध्यान में रखकर ही किया होगा। यह निश्चित है।

(बौद्ध धर्म और बिहार, पृष्ठ ३४-३५)

बुद्ध जी संस्कृत एवं वैदिक साहित्य के मर्मज्ञ नहीं थे, अन्यथा वे लोगों को बतला सकते थे कि वेद में गौ को अन्यथा अर्थात् जो मारने योग्य न हो, ऐसा कहा है। गौमेध का अर्थ पृथ्वी पर कृषि करना होता है। गौ का अर्थ इन्द्रिय होता है। अर्थात गौमेध का अर्थ इन्द्रियों को वश में करना होता है।

अश्वमेध का अर्थ **"अग्निर्वा अश्वः आज्यं मेद्यः"** अर्थात् बड़े पैमाने पर विशाल यज्ञ कुण्डों में घृत व सामग्री से लोकोपकारार्थ यज्ञ करना होता है।

इसी प्रकार अज का अर्थ पुराने चावल से होता है न कि बकरे से।

एतेऽपि ये याज्ञिका यज्ञ कर्माणि पशून व्यापाद यन्ति ते मूर्खाः परमार्थ श्रतेर्नजानन्ति। तत्र किल एतदुक्तम् जैर्यष्ठ व्यम्। अजावीहि यस्तावत् सप्त वार्षिकाः कथयन्ते न पुनः पशु विशेषात्।।

(पञ्चतन्त्र काकोवूकीयकम, पृष्ठ १०७)

जो याज्ञिक यज्ञ में पशुओं को मारते हैं वे मूर्ख हैं, क्योंकि वे यथार्थ रीति से वेद का अर्थ नहीं जानते। श्रुति में कहा है कि अजां से यज्ञ करना चाहिए। अज नाम सात साल पुराने वीहि धान्य का है न कि किसी बकरा नाम के पशु विशेष का।

कुछ स्थानों पर यज्ञों में पशुबलि कुछ लोगों द्वारा किये जाने पर सम्पूर्ण देश में एक आक्रोश उत्पन्न हो गया था और इसका घोर विरोध सभी तत्कालीन वैदिक शास्त्रों तथा महाभारत तक में किया गया है।

ऐसी बात कभी नहीं थी कि लाखों पशुओं को यज्ञ में बलि राजा या प्रजा के लोग देते थे, जैसा कि बौद्धों ने यज्ञों को बदनाम करने के लिए लिख मारा है।

मद्य-माँस व मैथुन का खुला प्रचारक बौद्ध मत था

अब हम यह दिखाते हैं कि देश के चारित्रिक पतन में बौद्धों का कितना हाथ रहा है? इस देश में शराब, माँस एवं व्यभिचार को सदैव बुरा माना गया था।

महर्षि मनु ने अपनी स्मृति में व्यभिचारिणी स्त्री व पुरुष को तप्त लोहे से जलाकर मार डालने का आदेश दिया है। किन्तु बौद्ध मतावलम्बियों ने शराब, माँस और व्यभिचार का खुला प्रचार देश में करा दिया था।

इस सम्बन्ध में प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान राहुल सांकृत्यायन ने अपने ग्रन्थ **बौद्धचर्या** की भूमिका में पृष्ठ ९ व १० पर लिखा है–

महायान ने सबके लिए सुदुश्चर बृद्धयान को ही एकमात्र रास्ता रखा। आगे चलकर इस कठिनाई को दूर करने के लिए कि उन्होंने धारणियों, बोधिसत्वों की पूजा का अविष्कार किया। इस प्रकार जब सहज दिशाओं का मार्ग खुलने लगा तब उसके अविष्कारों की संख्या भी बढ़ने लगी। मंजु श्री मूलकल्प ने तन्त्रों के लिए रास्ता खोल दिया।

गुह्य समाज ने अपने भैरवी चक्र के शराब, स्त्री संभोग तथा मन्त्रोच्चारण से इसे और भी आसान कर दिया। यह मत महायान के भीतर से ही उत्पन्न हुआ, किन्तु पहले इसका प्रचार भीतर ही भीतर होता रहा।

भैरवी चक्र की सभी कार्यवाहियाँ गुप्त रखी जाती थीं। प्रवेशाकांक्षी को कितने ही समय तक उम्मीदवारी करनी पड़ती थी। फिर अनेक अभिषेकों और परीक्षाओं के बाद वह समाज में मिलाया जाता था।

यह मन्त्रयान अर्थात् तन्त्रयान, वज्रयान सम्प्रदाय इस

प्रकार सातवीं शताब्दी तक गुप्त रीति से चलता रहा। इसके अनुयायी अपने को बाहर से ही महायानी कहते थे।

महायानी भी अपना विनय पिटक नहीं बना सके थे। इसलिए उनके भिक्षु लोग सर्वास्तिवाद आदि निकायों में दीक्षा लेते थे।

आठवीं शताब्दी में जब नालन्दा जो महायान का गढ़ था, वहाँ के भिक्षु सर्वास्तिवाद विनय के अनुयायी थे और वहाँ के भिक्षुओं को विनय के सर्वास्तिवाद की, बोधिसत्व चर्चा में महायान की और भैरवी चक्र में वज्रयान की दीक्षा लेनी पड़ी थी।

आठवीं से बारहवीं शताब्दी तक बौद्ध धर्म वस्तुतः व्रजयान और भैरवी चक्र का धर्म था। ......

वे लोग शराब में मस्त खोपड़ी का प्याला लिए शमशान या विकट जंगलों में रहा करते थे। ये लोग खुल्लम खुल्ला स्त्रियों और शराब का उपभोग करते थे। राजा अपनी कन्याओं तक को भी इनको प्रदान करते थे। धीरे-धीरे सारी भारतीय जनता एक तरह से इनके चक्कर में पड़कर कामी व्यसनी मद्यप अर्थात् शराबी और मूढ़ विश्वासी बन गयी।

उपरोक्त विवरण एक प्रसिद्ध विद्वान के ग्रन्थ का है जो बौद्ध धर्म की स्थिति का सही चित्र प्रस्तुत करता है। अब एक अन्य प्रसिद्ध ग्रन्थ का भी उदाहरण प्रस्तुत किया जाता है, जिसे बिहार सरकार के प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित

किया गया है।

बौद्ध धर्म और बिहार नामी इस ग्रन्थ में निम्न लेख दिया है

जिस समय मुहम्मद बिनबख्त्यार खिलजी ने बौद्ध विहारों पर हमला करना शुरू किया, उस समय प्रायः सारे बौद्ध **वज्रयान** सम्प्रदाय के उपासक हो गये थे। इस सम्प्रदाय का सिद्धान्त हठ योग के साथ मन्त्र मैथुन और मद्य पर ही आधारित था, जो सभी भगवान के विचारकों के प्रतिकूल थे। (पृष्ठ २२९)

कुछ काल बाद बौद्ध धर्म चौदह टुकड़ों में छिन्न-भिन्न हो गया। इन्हीं में से एक सम्प्रदाय का नाम **वैयुल्यवाद** पड़ा जो ईसा पूर्व प्रथम सदी में उत्पन्न हुआ। वैयुल्यवाद को ही **महायान** कहते हैं। इसी वैयुल्यवाद से **तन्त्रयान** की उत्पत्ति हुई, जिसकी आधार शिला रही हठ योग मन्त्र और मैथुन .... अब बौद्धों को ब्राह्मण धर्म की तरह अपने बुद्ध को विष्णु, शिव तथा शक्ति के समान देवी की कोटि में रखने की आवश्यकता पड़ी।

जहाँ भगवान बुद्ध ने व्यक्ति की पूजा का निषेध किया था, वहाँ बौद्ध लोग स्वयं बुद्ध की पूजा करने लगे। उन्हें बुद्ध की मूर्त्ति की पूजा, भक्ति और दर्शन मात्र से परम पद में रहने का सौभाग्य मिलने लगा। इसी समय बौद्धों ने एकाभिप्राय

से मैथुन कर्म की छूट दे दी।

(पृष्ठ २३०-२३१)

अब महायानियों ने बुद्ध वचन के सूत्रों को मन्त्र के रूप में ढाल दिया जिसे धारिणी कहा गया। यह मन्त्रयान कनिष्क के काल से गुप्त काल तक खूब पल्लवित हुआ।

.... मन्त्रयान की भित्ति पर ही वज्रयान सम्प्रदाय हर्षवर्धन के समय से प्रारम्भ होकर भारत में बौद्ध धर्म तब तक रहा जब तक बौद्ध धर्म भारत से लुप्त प्राय: न हो गया।

मन्त्रयान में जहाँ हठ योग, मन्त्र और मैथुन था, वहाँ वज्रयान में मद्य भी जुड़ गया। वज्रयानियों के घोर रूप का अन्दाजा इसी से लगाया जा सकता है कि मैथुन कर्म में उन्होंने सगोत्रा को भी छोड़ने की बात कौन कहे, सगी सम्बन्धी स्त्रियों को भी वर्जित नहीं माना।

ब्राह्मणी से चाण्डाली तक की ललनाओं के साथ गुह्य साधना की बातें कहीं जो जितना ही अधिक मैथुन कर्म में लीन रहेगा, उसे उतनी ही जल्द गुह्य तथा वज्र की सिद्धि होगी, ऐसा विधान वज्रयानियों ने चलाया।

१. अर्थात् पक्का व्यभिचारी ही सच्चा बौद्ध माना जाता था। क्या आज भी सच्चे बौद्ध की यही पहचान है?

२. उन्होंने जीव हिंसा, असत्य भाषण, चोरी और मैथुन को वज्र का मार्ग माना।

३. यहाँ तक मल-मूत्र और शुक्र अर्थात् वीर्य और रक्त के

भक्षण का भी विधान किया।

४. स्त्री इन्द्रिय को पद्म तुल्य माना और पुरुषेन्द्रिय को वज्र तुल्य।

(१)

ब्राह्मणादि कुलोत्पन्ननां मुद्रां वै अन्त्यजोद्भवाम् ॥२४॥
जनयित्री स्वसादि च स्वपुत्री भगयिनिकाम्।
कामयान् तत्व योगेन लघु सिद्धि साधकः ॥२५॥

(प्राज्ञोपाय विनि सूत्रम सिद्धि)

चाण्डाल कुल सम्भूतां डोम्बिकाम् वा विशेषतः।
जुगुप्सित कुलोत्पन्नां सेवयन् सिद्धि माप्नुयात्॥

(ज्ञान सिद्धि इन्द्रभूति पृष्ठ, ५८२)

(२)

प्राणितश्च त्वया घात्या वक्तव्यं च मृषावचः।
अदत्तं च त्वया ग्राह्यं सेवनं योषिता मपि ॥
अनेन वज्र मार्गेण वज्र सत्वान् प्रचोदयेत् ॥

(गुह्य समाज तन्त्र, पृष्ठ, १२०)

(३)

विणमत्र शुक्र रक्तानां जुगुप्सा नैवकारयेत्।
भक्षयेत् विक्षिना नित्यं गुह्यं त्रिवज्रजम् ॥

(तत्रैव, पृष्ठ, १३६)

(४)

स्त्री इन्द्रियं च यथा पद्मं वज्रं पुसुन्द्रिदयं तथा।

(ज्ञान सिद्धि, २४-४२
तथा बौद्ध और विहार पृष्ठ,२३३)

राजस्वलांभगाद् योगी प्रद्वन् सूरतामृतम।
नित्यमास्वाद्येद् वस्चु सभवेद जरामरः।।

अर्थ- स्त्री की योनि जो पद्म पुष्प के समान है, ऐसी रजस्वला स्त्री की योनि से निकलने वाले द्रव को जो योगी नित्य ग्रहण करता है, वह योगी अजर-अमर हो जाता है।

(पृष्ठ, १० आयुर्वेद दूत, नवम्बर-दिसम्बर ८२)

बौद्धों के भैरवी चक्र का रूप

इस स्थल पर बौद्धों का भैरवीचक्र क्या है? उसका खुलासा कर देना उपयुक्त होगा। बौद्धों के भैरवी चक्र के कार्यक्रम बन्द स्थानों पर चलते हैं, जिनमें इस सम्प्रदाय के अतिरिक्त अन्य किसी भी व्यक्ति को प्रविष्ट नहीं किया जाता है।

बहुत बड़े कमरे में इनका कार्यक्रम होता है। सभी सदस्य मय जोड़े के उसमें भाग लेते हैं। बिना स्त्री वालों को ये शामिल नहीं करते हैं।

सर्वप्रथम मध्य में एक वेदी बनाई जाती है। उस पर एक घड़ा रखते हैं। उपस्थित समूह में से कोई एक जोड़ी स्त्री-पुरुष नंगे हो जाते हैं। वे अपनी उपस्थेन्द्रियों को शराब

से धोकर स्वच्छ करते हैं।

प्रथम पुरुष नारी के गुप्तांग की पूजा चावल और रोली आदि से करता है। फिर नारी नर के गुप्तांग की पूजा करती है। सभी लोग हीं-हीं तथा लंकीन्लव आदि का जाप करते हैं। पूजा के बाद शराब का एक-एक पैग दो-दो तोला सबको मिलता है। सभी स्त्री-पुरुष उस शराब को पीते हैं।

शराब के बाद माँस परोसा जाता है फिर तीसरी बार मछली व शराब दी जाती है। फिर दही-बड़े परोसे जाते हैं। फिर चौथी बार शराब मिलती है। एक बार पुनः पाँचवी बार शराब का दौर चलता है।

इस प्रकार मद्य माँस-मीन अर्थात् मछली के पकोड़े व मैथुन, मुद्रा यह पाँच मकार होते हैं। उन सबके बाद रोशनी बन्द कर दी जाती है और रातभर मैथुन का क्रम जारी रहता है। यह मद्य, माँस, मीन, मुद्रा और मैथुन बौद्ध वाममार्गीय धर्म के मूल पंचमकार कहे जाते हैं। जिस पुरुष व स्त्री के गुप्तांग का पूजन होता है, वे दोनों **साधक साधिका** कहे जाते हैं। मैथुन क्रम के दो रूप होते हैं—व्यक्तिगत और समष्टिगत।

व्यक्तिगत एवं समष्टिगत में सारी स्त्रियों की चोलियाँ उतरवा ली जाती हैं और एक घड़े में डालकर डण्डे से घुमायी जाती हैं। फिर एक-एक आदमी उसमें हाथ डालकर एक-एक चोली निकाल लेता है। फिर जिस स्त्री की चोली

जिस पुरुष के पास पहुँचती है, वह उसी के साथ मैथुन करती है। प्रातः होने पर यह समारोह विसर्जित हो जाता है और हर स्त्री अपने असली जोड़े से जा मिलती है।

बिहार, बंगाल, उड़ीसा, मध्य प्रदेश आदि में इस वाममार्गीय बौद्ध मत का विशेष प्रचार है। इस मत की मान्यताएं निम्न प्रकार हैं, जो उनके मान्य ग्रन्थों से उद्धृत की जा रही हैं, देखिये–

मद्यं माँसं मीनं च मुद्रा मैथुनमेव च।
एते पंचमकाराः स्युर्मोक्षदा ह्य युगे।।२।।

(काली तंत्र)

मातृ योनिं परित्यज्य विहरेत सर्वयोकिषु।।

(महानिर्वाण तंत्र)

पीत्वा पीत्वा पुनः पीत्वा यावत्पतति भूतले।
पुनरूत्थाय वै पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते।।

(महानिर्वाण तंत्र)

अर्थात्–शराब, माँस, मछली के पकोड़े, मुद्रा व मैथुन इन पंचमकारों से हर युग में मोक्ष मिलती है। माता की योनि को छोड़कर सभी से संभोग किया जा सकता है। शराब पियो, खूब पियो, यहाँ तक कि बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ो। उठने पर फिर पियो। इस तरह पुनर्जन्म नहीं होता है।

इसी तरह की मूर्खतापूर्ण बातें इन बौद्ध वाममार्गीय सम्प्रदायवादियों ने गढ़ रखी हैं।

बौद्ध मत में चेला-चेली बनाने की विधि

एकान्त में स्थितिध्यानाव स्थिति भगवान बुद्ध के चित्त में विचार हुआ .... क्यों न भिक्षुओं को ही अनुज्ञा दे दूँ कि भिक्षुओं! तुम ही इन दिशाओं में, उन जनपदों में प्रवृजिन बनाओ, उप सम्पन्न करो।

इसलिए भगवान ने संध्या समय भिक्षु संघ को एकत्रित कर धर्म कथा कह सम्बोधित किया-

भिक्षुओं! मैं स्वीकृति देता हूँ। अब तुम्हें ही उन दिशाओं में द्रवृज्या देनी चाहिए, उपसम्पदा देनी चाहिए और उपसम्पदा देने का प्रकार यह है-

पहले सिर, दाढ़ी मुण्डवा कर, काषाय वस्त्र पहनकर, उपरना अर्थात् चादर एक कन्धे पर रखकर, भिक्षुओं को पाद वेदना कराकर, उकड़ू बैठाकर, हाथ जोड़कर 'ऐसे बोलो' कहना चाहिए-

बुद्धं शरणं गच्छामि।
धर्मं शरणं गच्छामि।
संघं शरणं गच्छामि।

इसी प्रकार इन्हें तीन बार बोलें। इन तीन शरणागमनों से पृवृज्या और उपसम्पदा देने की अनुज्ञा देता हूँ।

(बुद्ध चर्चा, पृष्ठ २८ तथा राहुल सांकृत्यायन कृत बौद्ध मत)

स्त्रियों द्वारा बुद्ध की मूत्रेन्द्रियों की वन्दना

योनि-लिंग पूजा का प्रारम्भ बौद्ध मत से

आनन्द ने निर्वाण के समय भगवान बुद्ध के गुप्तांग अर्थात् लिंगेन्द्रिय को स्त्रियों को दिखाकर उसकी वन्दना कराई और उन स्त्रियों के आँसुओं से भगवान का शरीर तर-बतर हो गया।

(बौद्ध धर्म और बिहार, पृष्ठ १५५)

क्या इससे यह स्पष्ट नहीं हो जाता है कि पुरुष मूत्रेन्द्रिय की पूजा करना बौद्ध मत में बुद्ध की लिंगेन्द्रिय की पूजा से ही प्रारम्भ हुआ है, जो आज भी भैरवी चक्र में बौद्धों द्वारा जारी है। इसी तरह बौद्ध मर्द भी नारी के गुप्तांग की पूजा शराब, रोली व चावलों से करते हैं।

- अरे कम्बख्त नीच लोगों! डूब मरो चुल्लू भर पेंशाब में, यही तुम्हारा बौद्ध मत है? अरे व्यभिचार प्रसार के ठेकेदारों! तुमको हमारे निष्कलंक ऋषि-मुनियों के पावन चरित्रों पर आक्षेप करते शर्म भी नहीं आती है? जब कि तुम स्वयं महाव्यभिचारी के प्रचारक हो।
- तुम अगर गन्दी किताबें नहीं छापोगे, तो तुमसे ज्यादा महानीच संसार में और कहाँ मिलेगा? ऐसा लगता है कि **'ललई सिंह यादव'** और **'गजाधर'** जैसे धूर्त्त बौद्धों में ही मिल सकते हैं, जिनकी किताबों की शैली देखकर लज्जा को भी लज्जा आ जाती है।

बौद्ध मत क्या सिखाता है? यह इन लोगों की किताबों को पढ़कर अंदाजा लगाया जा सकता है। लिंग-योनि की पूजा कराना, शराब पीकर सूअर का गोश्त खाना व उसका पेशाब पीना, क्या यही सच्चे बौद्ध धर्म का सदाचार है? जिसमें भोले-भाले जाटव, यादव व शाक्यों को भरती किया जाता है।

बौद्धों का **'बहुजन कल्याण प्रकाशन, लखनऊ'** ऐसे ही लोगों की गन्दी और भ्रष्ट किताबों को छाप-छापकर बौद्ध मत की भ्रष्ट भावना से दुनिया को परिचित करा रहा है कि बौद्ध लोग कितने गन्दे विचारों के होते हैं।

पौराणिक हिन्दू धर्म ग्रन्थों में निश्चित रूप से योनि-लिंग की पूजा प्रथा शिवलिंग पूजा के रूप में मन्दिरों में इन बौद्धों द्वारा श्लोकों व कथाओं के जोड़े जाने के बाद प्रारम्भ हुई होगी।

इस भ्रष्टाचार के आदि प्रचारक बौद्ध ही थे। यह आनन्द द्वारा बुद्ध जी के लिंग के दर्शन व वन्दना औरतों से कराये जाने से ही सिद्ध हो जाता है। अतः बौद्ध मत निश्चित रूप से भारत के लिए एक महाअभिशाप है।

बौद्ध संघों में घोर व्यभिचार

बौद्ध पुस्तकों के अनुसार बौद्ध मत के प्रारम्भ के साथ ही महावीर स्वामी जैन मत का प्रचार करते थे। जैन मत

वालों ने अपने मत के सत्संगों में नारियों के प्रवेश की व्यवस्था की हुई थी, जिससे उनमें उपस्थिति अधिक होती थी।

उसी की देखा-देखी आनन्द ने भी महात्मा बुद्ध से स्वीकृति लेकर बौद्ध संघों में नारियों के प्रवेश का नियम बना दिया। नारियाँ बौद्ध संघों में भिक्षुणी बनने लगीं।

ऐसी अवस्था में बौद्ध संघों में व्यभिचार की घटनाएं होने लगीं। गर्भपात, प्रेम लीलाओं आदि की बातें देखकर महात्मा बुद्ध ने स्वयं आनन्द से दुःखित होकर एक बार कहा था-

आनन्द! यदि स्त्रियाँ इस धर्म में नहीं आती तो यह धर्म एक हजार वर्ष तक ठहरता। पर चूँकि इस धर्म में स्त्रियों का प्रवेश भी हो गया है तो केवल पाँच सौ वर्षों तक ही जीवित रहेगा।

(बौद्ध धर्म और बिहार तथा बिहार की नारियाँ और बौद्ध धर्म, पृष्ठ-१३७)

कालान्तर में बौद्ध मत के अन्दर इनके लिए नियम बनाये गये ताकि व्यभिचार प्रसार को बौद्ध संघों में से रोका जा सके। कुछ नियम इस प्रकार हैं-

१. स्वप्न के अतिरिक्त जान-बूझकर वीर्यमोचन संघादि शेष है।
२. किसी भिक्षु का विकारयुक्त चित्त से किसी स्त्री के साथ

ऐसे अनुचित वाक्यों का कहना, जिन्हें कि कोई युवा किसी युवती से मैथुन के सम्बन्ध में कहता है, संघातिसेस है।

३. किसी भिक्षु का दूत बनकर किसी स्त्री की बात को किसी दूसरे पुरुष से या किसी पुरुष की बात किसी स्त्री से जाकर कहना तू जार बन या पत्नी बन या कुछ क्षण के लिए उसकी बन संघादिसेस है।

नोट-संघादिसेस का अर्थ है कुछ समय के लिए संघ से मुअत्तिली अर्थात् निष्कासित किया जाना।

जो कोई भिक्षुणी कामासक्त हो अन्ततः पशु से भी मैथुन धर्म सेवन करे वह पराजिका होती है अर्थात् साथ में न रहने लायक होती है।

(विनय पिटक, पृष्ठ-२१६)

उस समय षडवर्षीया भिक्षुणियाँ, शरीर, स्तन उरू, स्त्री इन्द्रिय खोलकर भिक्षुओं को दिखाती थीं, भिक्षुओं से दिल्लगी करती थीं। भिक्षुओं के पास स्त्रियों को देखती थी, जिससे कि वह उन पर आसक्त हों। इसका निषेध किया गया।

(विनय पीटक, पृष्ठ-५२६)

उस समय भिक्षुणियाँ बन्द जगहों में शौच जाती थीं षडवर्षीया भिक्षुणियाँ वहीं पर गर्भ गिराती थीं। भिक्षुणियों को बन्द जगहों में शौच नहीं जाना चाहिए।

बुद्ध ने कहा–

अनुमति देता हूँ नीचे अर्थात् भूमि पर खुले और ऊपर से छाये स्थान में शौच जाने की।

(विनय पिटक, पृष्ठ-५३१)

उपरोक्त बातें और उनके रोकने के नियम यह बताते हैं कि बौद्ध संघों में घोर व्यभिचार फैलता था। यह बुद्ध के समय से ही चालू हो गया था।

शराब व माँसाहार जहाँ हो, व्यभिचार तो वहाँ होना ही था। वेदादि शास्त्रों के प्रति इन वाममार्गीय बौद्धों की घृणा का पता निम्न श्लोक से लग सकता है–

वेद शास्त्र पुराणानि सामान्य गणिका इव।

(कुलाचार कथनम्, कुलार्णव तन्त्र)

अर्थात्– वेद, शास्त्र, पुराण साधारण वैश्या के समान हैं।

इस प्रकार के व्यभिचारपूर्ण दुराचारों के प्रभाव में बौद्ध मत वालों ने भारत के भोले-भाले लोगों को फँसाकर इस प्राचीनतम् श्रेष्ठ सभ्यता वाले समाज को घोर पतनावस्था में पहुँचा दिया।

किन्तु इस बौद्ध मत के प्रभाव में भारत का निम्न श्रेणी का वर्ग ही अधिकतर फंस सका था। बुद्धिमान श्रेष्ठ उच्च्च कुलोत्पन्न लोग सदैव ब्राह्मण वर्ग के प्रभाव में बने रहे थे, जिससे वैदिक संस्कृति किसी प्रकार अभी तक अक्षुण्य चली आ रही है।

बौद्ध मत ने देश को नपुंसक बना दिया

बौद्ध मत के प्रचार ने भारत का चारित्रिक विनाश ही नहीं किया, बल्कि देश को नपुंसक भी बनाकर रख दिया था। इतिहासकार लिखता है–

मुहम्मद बिनबख्तियार खिलजी ने उदत्तपुर पर केवल २०० सवारों को लेकर हमला किया, फिर भी बिहार प्रदेश में ऐसी कोई शक्ति नहीं थी, जो इन मुट्ठी भर सवारों का मुकाबला कर सके।

उसने पूर्ण निःशंक होकर उदत्तपुर के बिहार को घेर लिया। कोई उपाय न देखकर बिहार के भिक्षुओं ने स्वयं ही लड़ने का निश्चय किया और उनमें से अधिकांश लड़ते हुए उन तुर्क सवारों की तलवारों के घाट उतरे।

यहाँ तक कि कुछ लुके-छिपे भी थे। उनमें से भी अधिकांश ढूँढ़-ढूँढ़कर मार डाले गये। उसने बौद्ध विहार के पुस्तकालय में आग लगा दी। सदियों से अर्जित ग्रन्थ जलकर खाक हो गये .... उसी तरह वह जहाँ भी बौद्ध विहार देखता नहीं आग लगवा देता था।

उसने नालन्दा के बौद्ध विहारों को भी अग्नि की भेंट चढ़ा दिया। उसने सभी धार्मिक स्थानों के सुरक्षित ज्ञान भण्डार विज्ञान तथा सभ्यता, संस्कृति को ही भस्मसात कर दिया।

सच पूछिये तो उसने मूल को ही काट डाला .... बारहवीं शताब्दी के अन्त होते-होते शिक्षा केन्द्रों के साथ-साथ

उसने भारत के प्राचीन गौरव, संस्कृति और इतिहास का भी अन्त कर दिया। देश का इतना बड़ा और इस तरह का सर्वनाश पहले कभी नहीं हुआ था।

(बौद्ध धर्म और विहार, पृष्ठ २२७)

नालन्दा की ऊँची-ऊँची अट्टालिकायें, दिव्य विहार और उनमें स्थित सामग्री अवश्य ही लुटेरों का शिकार बनी होंगी, तभी तो वहाँ जो भी स्थान खोदकर निकाले गये हैं, वह अग्निदाह द्योतक चिन्ह पाये गये हैं।

एक बड़े बौद्ध विहार के भग्नावशेषों की मिट्टी जली हुई, घरों की चौखटें कोयला हुई और ताम्र पात्र आग से जले निकले। अग्नि दाह के कारण ही विहार में रखा चावल भण्डार जल गया था, जो खुदाई के अवसर पर प्राप्त हुआ है। उस जले हुए चावल में से लगभग आधा सेर चावल नालन्दा संग्रहालय में आज भी सुरक्षित हैं।

यह विवरण **'डॉ० हीरानन्द शास्त्री'** ने अपनी **'नालन्दा'** नामक पुस्तक के पृष्ठ **१४** पर दिया है।

बौद्धों की देशद्रोहिता

बौद्ध भारत की गद्दी पर किसी अबौद्ध को सीधी आँखों से देख भी नहीं सकते थे। जब कभी कोई विदेशी बौद्ध राजा भारत पर आक्रमण करता था, तब भारतीय बौद्ध उसका साथ देने में संकोच नहीं करते थे। अतः भारत से बौद्धों का

निष्कासन अवश्यम्भावी हो गया था।

(प्रांग मौर्य बिहार, पृष्ठ १६५)

यदि बौद्ध धर्म ने अपने विहार के लोगों को इतना कायर नहीं बना दिया होता तो क्या सम्पूर्ण भारत में से दो सौ मुस्लिम गुण्डे आक्रान्ताओं का सामना करके विहारों की रक्षा करने वाले शूरवीर या सैनिक भी न मिल सकते थे?

बौद्ध मत भारत के लिए कितना बड़ा अभिशाप रहा है? यह इसी के एक दृष्टान्त से समझा जा सकता है। बौद्ध मत ने भारत से शूरवीरता का भी अन्त कर दिया था। बौद्ध बनने के बाद लोग मानसिक दृष्टि से सम्भल नहीं रहे थे।

भारत पर जब यवनों के आक्रमण हुए तो सबसे ज्यादा संख्या में बौद्ध ही मुसलमान बने थे। यही बात सुप्रसिद्ध विद्वान **श्री पण्डित भगवद्दत्त जी** रिसर्चस्कालर ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थ **भारतीय संस्कृति का इतिहास** में पृष्ठ १२७ पर इस प्रकार लिखा है।

बौद्ध मत और इस्लाम का आक्रमण

हम लिख चुके हैं कि कभी बौद्ध मत दूर-दूर तक फैल चुका था। सारा काबुल बौद्ध मतानुयायी था। काबुल के पास वामियान के स्थान पर आज भी दीर्घकाय बुद्ध विभूतियाँ खड़ी हैं।

ईराक तक बौद्ध मत का क्षेत्र था। अब ये देश मुसलमानों

के अधिकार में आ रहे थे। मुसलमानों का धार्मिक आक्रमण बड़ा प्रबल हुआ। बौद्ध संस्कृति में उसे रोकने की शक्ति नहीं थी। वर्णाश्रम धर्म के पालने से जो बल जाति में उत्पन्न होता है, वह उनमें नहीं था।

काबुल का प्रदेश मुसलमान बन गया। सिन्ध के बौद्ध बहुत शीघ्र मुसलमान बन गये। हिन्दू इस आक्रमण का प्रतिरोध करते रहे। वे मरना अच्छा समझते थे, पर धर्म परिवर्तन उनमें से बहुत न्यून ही करते रहे।

हिन्दू के हृदय में अपनी संस्कृति का महत्व गहरा सन्निहित था। उच्च वर्णों के हिन्दू बहुत थोड़े मुसलमान हुए। छोटी जातियों के कुछ हिन्दुओं ने मत-परिवर्तन सरलता से कर लिया। वैदिक संस्कृति की सुदृढ़ता का यह स्पष्ट प्रमाण है।

उपरोक्त प्रमाण ये स्पष्ट करता है कि चारित्रिक पतन, मद्य, माँस व मैथुन में रत रहने तथा ईश्वर पर अविश्वास के कारण बौद्धों का नैतिक बल इतना क्षीण हो गया था कि वे इस्लाम का प्रतिशोध करने की शक्ति भी नहीं जुटा सके, जबकि ईश्वर विश्वासी उच्च वर्ण का हिन्दू सदैव उनसे टकराता रहा है।

भारतीय राजपूतों का गत इतिहास इसका ज्वलन्त प्रमाण है। बौद्धों के साथ ही जैनियों की अत्याधिक अहिंसा ने भी भारतीय वीरता को कुण्ठित बनाने का महान पाप किया है।

यहाँ यह पूछा जा सकता है कि बौद्ध मत ईश्वर विश्वासी नहीं था, तो उसका विदेशों में इतना प्रचार कैसे हो गया था? स्थिति यह है कि बाहर के देश तथा भारत की छोटी-छोटी जातियाँ आमतौर से माँसाहारी थीं। आज भी उनमें यह दोष व्यापक रूप में देखा जा सकता है।

बौद्ध भी मद्यपी एवं माँसाहारी थे। इसी आधार पर बौद्ध मत का ज्यादा प्रचार-प्रसार हो सका था, जहाँ आचार, व्यवहार, खानपान की प्रचलित मान्यताओं में भेद होते हैं तथा लोगों को नवीन मत को स्वीकार करने में रूकावटें आती हैं, पुरानी रस्मों को छोड़ना पड़ता है, वहाँ नवीन बातों व मतों का प्रचार कठिनाई से होता है।

मद्य, माँस और मैथुन इनका प्रचार बाहरी लोगों में था तथा बौद्ध मत स्वयं भी इन कुकर्मों का प्रचारक था, तो इन परिस्थितियों में इसे फूलने-फलने में देर न लग सकी थी।

ईश्वर के स्थान पर बुद्ध लोगों की आध्यात्मिक भूख मिटाने के लिए प्रस्तुत कर दिये गये थे। मोक्ष के लिए-

बुद्धं शरणं गच्छामि।
धर्मं शरणं गच्छामि।
संघं शरणं गच्छामि।

इसका गुरूमन्त्र उन्हें रटा दिया जाता था, जिसका वे जप करते थे।

भूत-प्रेत आदि के मिथ्या अन्धविश्वासों में उनको फांसे

रखना बौद्धों का सम्प्रदाय प्रचार के लिए साधन बन गया था। इस प्रकार नास्तिकता का प्रचार बौद्ध मत अज्ञानियों में भरपूर फूलता-फलता रहा।

साथ ही अन्दर से इतना कमजोर हो गया था कि इस्लाम की एक ही चोट में विदेशों की कौन कहे- यह बौद्ध मत भारत से भी लुप्त हो गया। मुसलमानों में भी मद्य, माँस और मैथुन का प्रचार था। अतः लोगों ने अधिकांश में सरलता से उसे अपना लिया।

आज पुनः भारत में बौद्ध मत के प्रचार का यत्न किया जा रहा है। किन्तु कोई भी समझदार, शिक्षित और उच्च कुल का व्यक्ति इस नास्तिक मत की ओर देखना भी पसन्द नहीं करता है।

इसका प्रचार यादवों, जाटवों, एवं शाक्यों में ही हो पा रहा है, जिनमें शिक्षा का अभाव है और जिन्होंने भारतीय संस्कृति व वैदिक धार्मिक साहित्य को नहीं देखा है।

जाटव वर्ग तो हिन्दू समाज में व्याप्त हुआ छुआ-छूत के कारण उधर झुक रहा है। **स्व० डॉ० भीमराव अम्बेडकर'** भी केवल इसी आधार पर अपने जीवन के अन्तिम वर्षों में बौद्ध बने थे, क्योंकि वे स्वयं भी जाटव वंश में से थे, अतः उनके अनुकरण में कुछ लोग उधर झुक रहे हैं।

काछी वर्ग और शाक्य वर्ग इसलिए झुक रहा है, क्योंकि काछी लोग अपने को शाक्य कहते हैं और स्वयं बुद्ध भी

शाक्य वंश में से ही थे। बौद्ध धर्म के उसूलों और मान्यताओं में से किन्हीं विशेषताओं से आकर्षित होकर उसकी ओर कोई नहीं जा रहा है।

हमारा विश्वास है कि यदि डॉ0 अम्बेडकर को भी बौद्ध साहित्य का गहन अध्ययन करने का अवसर मिल गया होता , तो वह कभी भी बौद्ध बनना पसन्द नहीं करते।

बौद्ध मत का प्रचार जहाँ सत्य का विरोधी है, वहीं ईश्वर के प्रति अनास्था का भी दोषी है। इसका प्रचार देश के चारित्रिक विनाश एवं देश से शूरवीरत्व एवं क्षात्रत्व के पतन का भी दोषी है, जिसके कारण मुस्लिम आक्रान्ताओं ने देश को रौंद कर रख दिया था।

इस मत का प्रचार मांसाहार एवं व्यभिचार का देश में प्रचार का कारण बनेगा जैसा कि भूतकाल में रहा है। अत: प्रत्येक समझदार व्यक्ति को इसके प्रचार को रोकने का यत्न करना चाहिए।

यह भारत की आर्य जाति के महान पूर्वजों के चरित्रों पर झूठा आक्षेप लगाकर विश्व शिरोमणि सभ्यता वाले देश भारत की छवि को संसार की दृष्टि में गिराता तथा निष्कलंक आर्य साहित्य को बदनाम करता है।

यह भारतीय गौरव एवं परम्पराओं का शत्रु है। यह राम व कृष्ण का निन्दक तथा रावण की राक्षसी सभ्यता का प्रचारक है।

यदि शाक्य लोग यह जान लेंगे कि स्वयं बुद्ध जी ने शाक्यों की उत्पत्ति सगे भाई-बहनों के व्यभिचार से घोषित करके उनके पूर्वजों को बदनाम किया है, तो वे भी ऐसे बुद्ध मजहब से दूर रहने में अपना गौरव समझेंगे।

बुद्ध साहित्यानुसार बुद्ध जी का जन्म भी शाक्य वंश में राजा शुद्धोधन के घर में हुआ था। बौद्ध साहित्य में शाक्यों की उत्पत्ति के बारे में लिखा है, देखिये बुद्ध की घोषणा है कि–

शाक्यों की उत्पत्ति भाई-बहिन के व्यभिचार से हुई

गौतम बुद्ध ने कहा– 'अम्बष्ट! तुम्हारे पुराने नाम गोत्र के अनुसार शाक्य आर्य पुत्र अर्थात् स्वामिपुत्र होते हैं। तुम शाक्यों के दासी पुत्र हो अम्बष्ट! शाक्य राजा इक्ष्वाकु अर्थात् योक्काक को पितामह कहकर धारण करते अर्थात् मानते हैं।

पूर्व काल में अम्बष्ट! राजा इक्ष्वाकु ने अपनी प्रिया मनापा रानी के पुत्र को राज्य देने की इच्छा से ओक्काक मुख अर्थात् उल्कामुख करन्डु-हस्थिनिक और सिनीमूट नामक चार बड़े लड़कों को राज्य से निर्वासित कर दिया।

वह निर्वासित हो हिमालय के पास सरोवर के किनारे एक बड़े शाक अर्थात् सागौन वन में वास करने लगे। गोरी जाति के बिगड़ने के डर से उन्होंने अपनी बहनों के साथ

सहवास अर्थात् संभोग किया। तब अम्बष्ट! राजा इक्ष्वाकु ने अपने आमत्यों और दरबारियों से पूछा, कहाँ हैं भो! इस समय कुमार?

देव! हिमवान के पास सरोवर के किनारे महाशाक वन है। वहीं इस वक्त कुमार रहते हैं। वह जाति के बिगड़ने के डर से अपनी बहनों के साथ सहवास अर्थात् संभोग करते हैं।

तब अम्बष्ट! राजा इक्ष्वाकु ने उदान से कहा-अहो कुमार! शाक्य, हैं रे कुमार। तब से अम्बष्ट! वह शाक्य के ही नाम से प्रसिद्ध हुए। वही इक्ष्वाकु उनका पूर्व पुरुष था।

(दीर्घ निकाय, पृष्ठ ३६, शाक्योत्पत्ति अम्बष्ट सुत्त नाम का अध्याय २)

अपने को शाक्य कहने वाले आँखे खोलकर देखें कि अगर वे बुद्ध जी के चेले बनेंगे तो लोग उन्हें भाई-बहन के व्यभिचार से उत्पन्न जाति वाले कहकर पुकारेंगे।

अतः बौद्ध मत से दूर रहना ही उनको ठीक लगेगा तो सम्पूर्ण बौद्ध मत हिन्दू अर्थात् वैदिक धर्म से घृणा व द्वेष के आधार पर चलाया गया था। आज भी बौद्ध लोग हिन्दू धर्म की निन्दा करके ही अशिक्षित लोगों को अपनी ओर खींच रहे हैं।

पर यह ध्यान में रखना चाहिए कि जिस मत में अपनी विशेषताएं नहीं होतीं केवल दूसरों की निन्दा व घृणा पर ही जिसका आधार होता है, उस मत का पाखण्ड ज्यादा दिन

तक नहीं चल सकता है।

समझ आने पर लोग उसे जल्द ही ठोकर मार देते हैं। यही दशा बौद्ध सम्प्रदाय की भी हुई थी और यही उसकी आगे होनी है। लोग इसका तिरस्कार करेंगे।

❑❑❑

॥ इति ॥

क्र. सं०	पुस्तक का नाम	लेखक	मूल्य
११.	याज्ञिक क्रियाओं का रहस्य	ओमप्रकाश कपूर	अतिशीघ्र
१२.	हनुमानादि वानर बन्दर थे– या मनुष्य?	अमर स्वामी सरस्वती	२००.००
१३.	इस्लाम सन्देहों के घेरे में	रिसर्चस्कॉलर– • राकेश कुमार आर्य एडवोकेट • पं. देवप्रकाश अरबी फाजिल • लाजपतराय अग्रवाल	६००.००
१४.	भारतीय शिक्षा का– दार्शनिक आधार	डॉ. कीर्ति देवी सेठ एम०ए०, एम०एड०, डी.फिल (शिक्षा विभाग-प्रयाग वि०वि०)	३००.००
१५.	गांधी वध क्यों और कैसे? (डीलक्स संस्करण)	मूल कृति नाथूराम गोड्से सम्पादक–लाजपतराय अग्रवाल	५००.००

मुख्य अभियुक्त अमर शहीद नाथूराम गोड्से के अदालती बयान के साथ-साथ गांधी वध के पूर्व एवं पश्चात की विशद घटनाओं का सम्पूर्ण वास्तविक चित्रण, सचित्र रूप में उद्धृत किया गया है। पुस्तक की मौलिक सामग्री स्वयं अपना परिचय एवं महत्व को दर्शाती है। पाठकों से अनुरोध है कि एक बार अवश्य पढ़ें।

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

E-mail : lajpatraiaggarwal1058@gmail.com
Website: www.amarswamiprakashanvibhag.com
Tele. : 0120-2701095, 0120-2700042
M. : 09910336715, 09871230321, 09810816715

: नोट :

बृहद सूची-पत्र प्राप्त करने हेतु कृपया उपरोक्त हमारी वेबसाईट से डाउनलोड करें।

धन्यवाद!

सम्पर्क : अतुल गुप्ता, 09871230321

साहित्य जगत में जिसका नाम ही काफी है।

प्रकाशक

अमर स्वामी प्रकाशन विभाग

१०५८, विवेकानन्द नगर, गाजियाबाद- २०१००२ (उ.प्र.)

E-mail : lajpatraiaggarwal1058@gmail.com

Website: www.amarswamiprakashanvibhag.com

Ph. : 0120-2701095, 0120-2700042

M. : 09910336715, 09810816715, 09871230321